ओ३म्

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : ३ अंक : ३२ १ अगस्त २०१७ जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० रु वार्षिक

जोधपुराधीश महाराज जसवन्तसिंह को उपदेश देते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती

आर्यसमाज मगरा पूंजला द्वारा विद्यालयों में तीन दिवसीय वेद प्रचार एवं विद्यार्थी व्यक्तित्व उन्नयन एवं सम्प्रेषण कौशल शिविर लगाते हुए

कोटा आर्यसमाजों द्वारा संचालित आठ दिवसीय वेद प्रचार कार्यक्रम की एक झलक

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा लिखित समस्त साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों व सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार, स्थापना व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

वर्ष : ३ अंक : ३२

दयानन्दाब्द : -१९४

विक्रम संवत् : भाद्रपद २०७४

कलि संवत् ५११८

सृष्टि संवत् :१,९६,०८,५३,११८

मार्गदर्शक

पं. सत्यानन्दजी वेदवागीश,

सम्पादक मण्डल :

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर

डॉ. सुरेन्द्रकुमार, हरिद्वार

डॉ. वेदपालजी, मेरठ

पं. रामनारायण शास्त्री, सिरोही

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

कार्यवाहक सम्पादक :

कमल किशोर आर्य

Email: sampadakmdsprakash@gmail.com

9460649055

प्रकाशक :

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जसवन्त कॉलेज के पास, जोधपुर ३४२००१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है । किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र जोधपुर ही होगा ।

Web.-www.dayanadsmritinyas.org.

वार्षिक शुल्क :१५० रुपये

आजीवन शुल्क : ११०० रुपये

(१५वर्ष)

अनुक्रमणिका

	क्या	कहाँ
१.	सम्पादकीय	४
२.	प्रार्थना	६
३.	वेद वचन	१०
४.	तू जनों की ज्योति....	१२
५.	आर्यसमाज का इतिहास	१३
६.	समाचार : मगरा पूंजला....	१७
७.	रक्षाबन्धन का सन्देश....	१८
८.	सुख-दुख की समस्या	२०
९.	सच्चा स्वराज्य....	२६
१०.	कोटा संभाग : वेद प्रचार सप्ताह....	३३
११.	वृष्टि यज्ञ व वार्षिकोत्सव सम्पन्न...	३४

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास

बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646

IFSC BARB0JODHPU

यह पांचवा अक्षर जीरो है

सम्पादकीय

श्री श्री १००८ आनंदपाल सिंह महाराज

३ सितंबर २०१७ को लगभा ४० आपराधिक मामलों से भूषित महाराज आनंदपाल सिंह अपने दो साथियों के साथ ११ पुलिसकर्मियों को घायल करते हुए अंतर्धान हो गए। तब से २४ जून २०१७ की रात तक राजस्थान के गृहमंत्री इन महाराज से सम्बंधित प्रश्न पर आपा खो बैठे बैठते थे। महाराज को शासन के सामने प्रकट करने पर ५ लाख रुपये का ईनाम भी रखा गया था। जब कभी पुलिस या प्रशासन महाराज के साम्मुख्य के लिए परिजनों के पास जाते थे तो परिजन व भक्तगण इसे पुलिस की कायरता कहते थे, अनशन की धमकी तक देते थे। २४ जून २०१७ की रात को महाराज के ठिकाने का पता मिलते ही पुलिस ने महाराज से सानिंध्य माँगा। महाराज तो मोक्ष पर अड़े थे। किंतु सशरीर मोक्ष नहीं मिलता है, इसलिए जिद पर अड़े महाराज पुलिस से शस्त्रार्थ करते शरीर त्याग गए। भक्त लोग महाराज के सानिंध्य से वंचित होने के अवसर को भुनाने के लिए इस मोक्ष को भी अपने व जाति के लिए कल्याणकारी बनाने में जुट गए। परिणामतः थोड़ी सी सांसारिक नश्वर वस्तुओं को नष्ट किया, साथ ही कुछेक नश्वर मानवों को देह त्यागनी पड़ी। महाराज आनंदपाल सिंह अमर हो गए। महाराज के यशस्वी भक्तों ने दुखी होकर अपनी ही संपत्ति (राष्ट्र की संपत्ति रक्षण की दृष्टि से अपनी ही संपत्ति है) यथा कुछेक बसों को, कुछ किलोमीटर रेल पटरी को और कुछ रेल आवासों को नष्ट कर दिया। कुछ एक लोगों की मौत का कारण भी बने और थोड़ा सा आम जनता को भी कष्ट दिया। क्योंकि आम जनता ऐसे महाराज की मौत पर भक्तों के हित के लिए कुछ तो दुःखी होगी ही।

कृपया आश्चर्य ना करें ! यदि समाज का नेतृत्व करने वाले लोग समाज को दिग्भ्रमित करते रहे तो उपर्युक्त पुराण अवश्य लिखी जाएगी। आनंदपाल सिंह की मूर्ति लगेगी, मंदिर या थानक बनेगा, माताएं, बहने और भोले भाईलोग मनौती के लिए जायेंगे– राजस्थान के कुख्यात अपराधी आनंदपाल सिंह के मामले में यह स्पष्ट होता है। एक दुर्दांत और कुख्यात अपराधी का नायकीकरण कोई समाज या जाति नहीं, कोई गिरोह ही कर सकता है। जागरूक पाठक समाचार माध्यमों से सारे घटनाक्रम से सुपरिचित होंगे। मैं कुछ बातें रेखांकित करना चाहता हूँ।

१. एडीजी क्राइम, एडीजी कानून–व्यवस्था और एडीजी एटीएस ने १६ जुलाई को पुलिस मुख्यालय में पत्रकारों से कहा "आनंदपाल ऐसा अपराधी था जिसकी कोई जाति धर्म नहीं। गैंग में कई जाति समुदाय के लोग थे। नानूराम की उसने इस कदर निर्मम हत्या की , सुनकर रोंगटे खड़े हो जाएँ। गैंग ने नानूराम को पीटा, फिर [illegible] िया, मरा नहीं

तो गला काटा, वह भी नहीं कटा तो रेत डाला। फिर शरीर के कई टुकड़े कर दिए। सबूत मिटाने के लिए इन टुकड़ों को एसिड में डाला। जो हड्डियां नहीं गली, उन्हें पीसकर हाईवे और अन्य जगह एसिड के साथ फैंक आये। आनंदपाल के खिलाफ हत्या लूट डकैती वसूली मारपीट तस्करी सहित करीब ४0 मामले दर्ज थे"

२. आनंदपाल की फरारी के बाद से पुलिस जो भी कार्यवाही उसे पकड़ने के लिए करती रही, उसका परिवार और राजपूत समाज न सिर्फ विरोध करते रहे, बल्कि पुलिस के द्वारा आनंदपाल को खोजने के लिए परिजनों व साथियों से पूछताछ को भी प्रताड़ना बताकर आमरण अनशन और आंदोलनों की धमकी तक देते रहे हैं.

३. सब जानते हैं कि अपराधी को शरण देने वाले अपराधी होते हैं। आनंदपाल अपने परिजनों व सहयोगियो से परे नहीं था। किंतु किसी ने भी पुलिस या प्रशासन हो कभी नहीं बताया। क्या वे विधि और व्यवस्था के अपराधी नहीं है?

४. जब तक आनंदपाल फरार था एवं उनके संपर्क में था, तब तक परिजनों ने उसके आत्मसमर्पण का कोई प्रयास नहीं किया। मरने के बाद वकील और रिश्तेदार आरोप लगा रहे हैं कि पुलिस ने सहयोग नहीं किया। किंतु तथाकथित आत्मसमर्पण की जो शर्तें सामने आई है उनसे तो यही लगता है कि आनंदपाल एक अपराधी के रूप में आत्मसमर्पण नहीं, बल्कि अभिमान के साथ अपनी शर्तों पर, पुलिस, प्रशासन और कानून का मजाक उड़ाते हुए खुद अपने किए अपराधों से बरी होकर, राजनेताओं और प्रशासन पर अपने अपराधी बनने की पृष्ठभूमि थोपकर निर्दोष घोषित होना चाहता था या कि हीरो बनना चाहता था। अपनी विनाशकारी "सामर्थ्य" का परिचय देने वाले आनंदपाल के भक्तों व परिजनों ने मीडिया के सामने सभा कर आनंदपाल को समर्पित क्यों नहीं किया?

५. फरारी के बाद से ही आनंदपाल की ढाल बन रहे परिजन, सहयोगी और राजपूत समाज आनंदपाल के मरने के बाद शरलॉक होम्स के अवतार बन गए और मुठभेड़ को फर्जी घोषित कर दिया! सीबीआई जांच की मांग करने लगे!

६. ६ जुलाई के समाचार पत्रों में राजपूत समाज के नेताओं के संदेश छपे जिन में यहॉ तक कहा गया कि "जलते राजस्थान का फायदा उठा लो, फिर मौका ना मिलेगा". यह जातिगत अराजकता की पराकाष्ठा है।

७. यही फायदा उठाने के लिए (बिना अंतिम संस्कार के?) श्रद्धांजलि सभा एक रैली के रूप में की गई जिसमें मंच से घोषणा की गई कि रेल की पटरी उखाड़ देंगे और हाईवे जाम करेंगे। अखबार इसके साक्षी है। कितनी सुंदर श्रद्धांजलि है?

८ लगभग २ किलोमीटर रेल की पटरी उखाड़ दी गई, जो बिना मशीनी साधनों के खाली हाथों होना असंभव है। यह आनंदपाल को श्रद्धांजलि थी– जो नायक और भक्तों–दोनों के

चरित्र को उजागर करती है.

६ सांवराद रेलवे स्टेशन पर मौजूद जीआरपी एवं आरपीएफ के जवानों को मारा पीटा और उनके नाखून तक निकालने की कोशिश की गयी। जब उन्होंने स्टेशन पर बनी रेल आवासों में शरण ली तो उन रेल आवासों को गिरा दिया गया। यह भी खाली हाथ असंभव है। कितनी सुंदर श्रद्धांजलि?हाथों में पुष्प की बजाय विनाशकारी साधन!

१० एक "सभ्य" समाज द्वारा आनंदपाल को दी गई श्रद्धांजलि के कारण कर्फ्यू लगाना पड़ा। श्रद्धा से अभिभूत लोग पुलिस की एक एके ४७ राइफल एवं दो पिस्तौल ले भागे। "सभ्य" और हथियारों की "पूजा" करने वाले श्रद्धालु लोग जो थे!

११ . आनंदपाल की लाश का दो बार पोस्टमार्टम हो चुका था और इसके बाद लाश को रखना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं था। किंतु परिजनों और भक्तों ने अपने श्रद्धेय की लाश को दाह संस्कार के नैसर्गिक अधिकार से भी वंचित रखा–सिर्फ भावनात्मक रुप से समाज व शासन का दोहन (ब्लैकमेल) करने के लिए। भाव के भी अंतिम संस्कार के नैसर्गिक अधिकार को छीनने वाले लोग, मानवाधिकार की मांग करते हैं!

ऐसे काम किसी भी सभ्य समाज के नहीं हो सकते। गिरोह और समाज में अंतर सभ्य लोगों को समझना होगा। यह काम जो राजपूत समाज के लोग कर रहे हैं –वे सभ्य समाज के ना होकर गिरोह के हैं। अगर यही लोग सभ्य समाज की तरह आनंदपाल के जीवित रहते उसे अपराध छोड़कर सत्य मार्ग पर आने का और अपराध से अर्जित संपत्ति सरकार को या पीड़ितों को लौटाने का काम उससे करवाते तो प्रशंसनीय होता। अब तो ये एक अपराधी को महिमामंडित कर रहे है– सिर्फ जातिगत राजनीति करने के लिए।शर्म की बात है! यह जातिवाद के जहर का ही असर है जिसमें पता ही नहीं चलता कि कब एक संगठन गिरोह बन गया!

प्रजा के योग–क्षेम का वहन शासन का दायित्व होता है। सभी विचार करें कि इस मामले में शासन अपने दायित्व का निर्वहन करने में कहाँ तक सफल रहा?आनंदपाल के शव के संस्कार में विलम्ब, संस्कार से पूर्व श्रद्धांजलि सभा की अनुमति, मामले से निपटने के लिए जातिगत आधार पर आरक्षियों को लगाना, आन्दोलन के नेताओं के अवसरवादी होने के ऑडियो प्रचारित होने के बाद भी नेताओं और आन्दोलनकारियों के प्रति सख्ती का अभाव आदि तो यही कहते हैं कि शासन के प्रत्यक्ष या परोक्ष, जाने–अनजाने सहयोग से ऐसे आंदोलनों को बल ही मिलता है।

डाकू रत्नाकर की एक कथा है कि जब वह महर्षि नारद को मारने वाला था तो नारद ने उससे पूछा कि तुम हत्या किसके लिए करते हो? रत्नाकर ने कहा परिवार के भरण पोषण के लिए। नारद ने पूछा कि जिस परिवार के पालन पोषण के लिए हत्या करते

हो क्या वह तुम्हारे आपके पाप में भी सहभागी होंगे?डाकू रत्नाकर ने पूछा तो परिजनों नें मना कर दिया और रत्नाकर वाल्मीकि बन गया!

प्रश्न उठता है कि कर्म के फल से बचना क्या इच्छा पर निर्भर है?

मांसाहार को पाप मानते हुए मनु महाराज कहते हैं:

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रय विक्रयी ।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घटका। । मनुस्मृति ५/५१

अर्थात मांसाहार की अनुमति देने वाला, खरीदने वाला, बेचने वाला, मांस काटने वाला, पशु मारने वाला, पकाने वाला, परोसने वाला और खाने वाला ये आठ घोर पापी हैं।

आनंदपाल के पाप को जानने वाले और सब कुछ जानते हुए उसकी पापजनित कमाई भोगने वाले परिजन, उसकी मौत के बाद अराजकता और हिंसा का नंगा नाच करने वाले लोग क्या पाप के भागी नहीं होंगे?

किंतु वोटों की राजनीति अनीति के इस युग में जिसमें सत्य को नहीं, किंतु संगठन या कि गिरोह में ही शक्ति मानने वाले लोग अपने गिरोह को बनाने, चलाने और उससे लाभ उठाने के लिए जो ना करें वह ठीक है। परस्त्रीगमन के आरोप में फॅसे एक राजनेता की पत्नी कहती है मर्दों में यह सब चलता है। बेटी उसके साथ खड़ी होकर राजनीति की विरासत को आगे बढ़ाती है। स्वतंत्रता सेनानियों को यातनाएँ देने के लिए मशहूर एक पुलिस कप्तान की संतान जब राजनीति में पाँव जमा लेती है तो वही पुलिस कप्तान किसान केसरी बन जाता है। चौराहे पर मूर्ति भी लग जाती है।

न्याय और सत्य को तो मानो कोई छूना ही नहीं चाहता। पूरे समाज और राष्ट्र ने मान लिया है कि जब दोषी परिजन हो, पार्टी या जाति का हो तो न्याय और सत्य की धज्जियाँ भले ही उड़ जाय, पूरी बेशर्मी ओढ़कर भी परिजन की, पार्टीजन की और जातिभाई की रक्षा होनी चाहिए। इसके लिए बड़े से बड़ा वकील करेंगे, जन आन्दोलन करेंगे, दंगे करवाएंगे, हड़ताल और शहर, राज्य और देश बंद करेंगे। भाड़ में जाये देश, धर्म और समाज!

इसी भाई भतीजावाद और जातिवाद ने कितनी जड़ें जमा ली है, इसका पता ऐसे नियमों से चलता है जिनके अनुसार किसी टेंडर कमेटी के सदस्य को यह प्रमाणपत्र देना पड़ता है कि कोई भी निविदादाता से उसका कोई रक्त या व्यापारिक सम्बन्ध नहीं है, उसके हित नहीं जुड़े हैं। यहाँ तक कि एक न्यायाधीश के समक्ष उसके किसी परिजन या सम्बन्धी का मामला आ जाय तो उसे उस मामले से हटना पड़ता है, या उसे हटाया जा सकता है। एक न्यायाधीश पर भी व्यवस्था और प्रजा विश्वास नहीं कर सकती कि वह न्याय के लिए अपने स्वजनों को दण्डित करेगा। क्या मानव का इससे अधिक पतन हो सकता है?

कोई समय था कि एक राजा अपने अपराधी और समाज के लिए घातक पुत्र को राजगद्दी न दे देशनिकाला दे दिया करता था। क्योंकि हित परिजन का नहीं, न्याय और धर्म का देखा जाता था। वाल्मीकि रामायण में महाराज सगर द्वारा अपने पापप्रवृत्त पुत्र असमंज को देशनिकाला देने का प्रकरण है। वह न्यायप्रियता भी नैसर्गिक थी।

अब नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत कहते हैं कि कोई व्यक्ति अपने या अपनों के मामले में स्वयं निर्णायक नहीं हो सकता! यही पतन है जिसके चलते परिवार, जाति और दल के लिए सबकुछ निछावर! ऐसे ही मामलों में एक प्रासंगिक सन्देश इन्टरनेट पर चला है, उसे यथवत उद्धृत कर रहा हूँ:

कश्मीरियों की नजर में अफजल निर्दोष...

राजपूतों की नजर में आनंदपाल निर्दोष....

जाटों की नजर में गोदारा निर्दोष..

दक्षिण भारतीयों की नजर में वीरप्पन निर्दोष..

तमिलों की नजर में प्रभाकरन निर्दोष..

सरदारों की नजर में भिंडरावाला निर्दोष..

मुस्लिमों की नजर में सोहराबुद्दीन निर्दोष..

तो फिर दोषी तो शायद वो सैनिक ओर पुलिसवाले ही हैं जो देश के लिये अपनी जान की बाजी लगा देते हैं... अपनी सोच बदलो! जाति और धर्म की दीवार तोड़ कर देश की सोचो! अन्यथा,

अपूज्याः यत्र पूज्यन्ते पूज्यानां तु व्यतिक्रम।
त्रीणि तत्र वर्तन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयं ।।

अगस्त माह में प्रमुख पर्व आ रहे हैं: श्रावणी पर्व, स्वतंत्रता दिवस और श्रीकृष्ण जन्माष्टमी। श्रावणीपर्व जनसामान्य में रक्षाबंधन या राखी के रूप में भी मनाया जाता है। इस अंक में "**रक्षा बन्धन का संदेश**" और "**सच्चा स्वराज्य**" शीर्षकों में स्वामी श्रद्धानंद जी महाराज के विचार आपको पढने को मिलेंगे। वेद रक्षा, प्रचार और प्रसार का संकल्प आर्यजन श्रावणी पर लें और महर्षि के योगेश्वर श्रीकृष्ण को समाज में स्थापित करने का संकल्प जन्माष्टमी को।

–कमलकिशोर आर्य

आर्याभिविनय से

(द्वितीय प्रकाश)

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्या थातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।।२।। –यजुर्वेद अध्याय ४० । मन्त्र ८

व्याख्यान– "**स, पर्यगात्**" वह परमात्मा आकाश के समान सब जगह में परिपूर्ण (व्यापक) है। "**शुक्रम्**" सब जगत् का करने वाला वही है । "अकायम्" और वह कभी शरीर (अवतार) नहीं धारण करता । क्योंकि वह अखण्ड, अनन्त और निर्विकार होने से देहधारण कभी नहीं करता । उससे अधिक कोई पदार्थ नहीं है, इससे ईश्वर का शरीर धारण करना कभी नहीं बन सकता । "**अव्रणम्**" वह अखण्डैकरस, अच्छेद्य, अभेद्य, निष्कम्प और अचल है, इससे अंशांशिभाव भी उसमें नहीं है, क्योंकि उसमें छिद्र किसी प्रकार से नहीं हो सकता । "**अस्नाविरम्**" नाड़ी आदि का प्रतिबन्ध (निरोध) भी उसका नहीं हो सकता । अतिसूक्ष्म होने से ईश्वर का कोई आवरण नहीं हो सकता । "**शुद्धम्**" वह परमात्मा सदैव निर्मल, अविद्यादि क्लेश, जन्म, मरण, हर्ष, शोक, क्षुधा, तृषादि दोषोपाधियों से रहित है । शुद्ध की उपासना करनेवाला शुद्ध ही होता है और मलिन का उपासक मलिन ही होता है "**अपापविद्धम्**" परमात्मा कभी अन्याय नहीं करता, क्योंकि वह सदैव न्यायकारी ही है । "कविः" त्रैकालज्ञ (सर्ववित्), महाविद्वान्, जिसकी विद्या का अन्त कोई कभी नहीं ले सकता । "मनीषी" सब जीवों के मन (विज्ञान) का साक्षी–सबके मनका दमन करनेवाला है । "**परिभूः**" सब दिशाओं और सब जगह में परिपूर्ण हो रहा है, सबके ऊपर विराजमान है। "**स्वयम्भूः**" जिसका आदि कारण–माता–पिता, उत्पादक कोई नहीं, किन्तु वही सबका आदिकारण है । "**यथातथ्यतोर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः**" उस ईश्वर ने अपनी प्रजा को यथावत् सत्य, सत्यविद्या जो चार वेद उनका सब मनुष्यों के परमहितार्थ उपदेश किया है । उस हमारे दयामय पिता परमेश्वर ने बड़ी कृपा से अविद्यान्धकार का नाशक, वेदविद्यारूप सूर्य प्रकशित किया है और सबका आदिकारण परमात्मा है, ऐसा अवश्य मानना चाहिए । ऐसे विद्यापुस्तक का भी आदिकारण ईश्वर को ही निश्चित मानना चाहिए । विद्या का उपदेश ईश्वर ने अपनी कृपा से किया है क्योंकि हम लोगों के लिए उसने सब पदार्थों का दान किया है तो विद्यादान क्यों न करेगा ? सर्वोत्कृष्टविद्या पदार्थ का दान परमात्मा ने अवश्य किया है और वेद के विना अन्य कोई पुस्तक संसार में ईश्वरोक्त नहीं है । जैसा पूर्ण विद्यावान् और न्यायकारी ईश्वर है वैसे ही वेदपुस्तक भी हैं । अन्य कोई पुस्तक ईश्वरकृत, वेदतुल्य वा अधिक नहीं है ।

इस विषय का अधिक विचार ग्रन्थ "सत्यार्थप्रकाश" और "ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका" मेरे किये ग्रंथों में देख लेना ।।२।।

वेद वचन

युक्त आहार-विहार

जुषस्व सप्रथस्तमं वचो देवप्सरस्तमम् ।

हव्या जुह्वान आसनि ।। ऋग्वेद-१।७५।१

पदार्थः-हे विद्वान् ! **(आसनि)** अपने मुख में **(हव्या)** भोजन करने योग्य पदार्थों को **(जुह्वानः)** खानेवाले आप जो विद्वानों का **(सप्रथस् तमम्)** अति विस्तारयुक्त **(देवप्सरस्तमम्)** विद्वानों को अत्यन्त ग्रहण करने योग्य व्यवहार वा **(वचः)** वचन है **(तम्)** उसका **(जुषस्व)** सेवन करो ।

भावार्थः- जो मनुष्य युक्ति पूर्वक भोजन पान और चेष्टाओं से युक्त ब्रह्मचारी हों, वे शरीर और आत्मा के सुख को प्राप्त होते हैं ।

इन्द्रस्य स्यूरसीन्द्रस्य ध्रुवोऽसि ।

ऐन्द्रमसि वैश्वदेवमसि ।। यजुर्वेद-५।३०

पदार्थः- हे जगदीश्वर वा सभाध्यक्ष ! जैसे **(वैश्वदेवम्)** समस्त पदार्थों का निवास स्थान अन्तरिक्ष है, वैसे आप **(ऐन्द्रम्)** सबके आधार **(असि)** हैं । इसी से हम लोगों को **(इन्द्रस्य)** परमैश्वर्य के साथ **(स्यूः)** संयोग करनेवाले **(असि)** हैं और **(इन्द्रस्य)** सूर्यादि लोक वा राज्य को **(ध्रुवः)** निश्चल करनेवाले **(असि)** हैं।

भावार्थः-इस मन्त्र में श्लेष और उपमालङ्कार हैं । जैसे सकलैश्वर्य का देनेवाला जगदीश्वर है, वैसे सभाध्यक्षादि मनुष्यों को भी होना चाहिए ।

लेखकों से निवेदन

इस पत्रिका का उद्देश्य महर्षि मिशन को प्रचारित-प्रसारित करना हैं । आर्य जगत के चिंतकों और लेखकों से निवेदन है कि ऋषि मिशन की पूर्ति में सहयोग हेतु अपनी रचनाओं को प्रकाशनार्थ भिजवाएं । रचनाएँ महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के पते पर या sampadakmdsprakash@gmail.com **के पते पर ईमेल से भी भेजी जा सकती हैं ।**

—संपादक

प्रभु भक्ति का फल

अयमग्निः सुवीर्यस्येशे हि सौभगस्य ।

राय ईशे स्वपत्यस्य गोमत ईशे वृत्रहथानाम् ।। –सामवेद–६० ।।

पदार्थः– (अयम्) यह (अग्निः) परमात्मा वा भौतिक (सुवीर्यस्य, सौभगस्य हि) सुन्दर वीर्य और सौभाग्य का (ईशे) स्वामी है। (रायः) धन का (स्वपत्यस्य) सुन्दर सन्तान का (गोमतः) और गवादि पशुयुक्त होने का (ईशे) अधिष्ठाता है, तथा (वृत्रहथानाम्) वृत्र जो रोगादि शत्रु–असुर हैं, उनके नाशकों का भी अधिष्ठाता है ।

भावार्थः– परमात्मा की भक्ति और भौतिक अग्नि में हवन करने वा उससे अनेकविध शिल्पप्रयोग आदि द्वारा मनुष्यों को बल, वीर्य, पुरुषार्थ, सौभाग्य, धन, सुसन्तान और गवादि पशु प्राप्त होते हैं और सब दुष्ट रोगादि असुर, शत्रुगण का नाश होता है, क्योंकि परमात्मा वा भौतिक अग्नि इन सबका ईशिता है ।

ईश्वर–प्राप्ति से दुःख–निवृत्ति

नैनं प्राप्नोति शपथो न कृत्या नाभिशोचनम् ।

नैनं विष्कन्धमश्नुते यस्त्वा बिभर्त्याञ्जन ।। अथर्व.–४।९।५।

पदार्थः–**(न)** न तो **(एनम्)** इस 'पुरुष' को **(शपथः)** क्रोधवचन, **(न)** न **(कृत्या)** हिंसा–क्रिया और **(न)** न **(अभिशोचनम्)** महाशोक **(प्राप्नोति)** पहुँचता है और **(न)** न **(एनम्)** इसको **(विष्कन्धम्)** विघ्न **(अश्नुते)** व्यापता है, **(यः)** जो 'पुरुष' **(आञ्जन)** हे संसार को व्यक्त करने वाले ब्रह्म! **(त्वा)** तुझको **(बिभर्ति)** धारण करता है ।

भावार्थः– जो मनुष्य शुद्ध अन्तःकरण से परमात्मा को आत्मा में धारण स्थिर करता है, उसको क्रोध, हिंसा व शोक नहीं होते एवं आध्यात्मिक शान्ति होने से आधिभौतिक और आधिदैविक शान्ति भी मिलती है ।

"प्रार्थना" अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं उनके लिए ईश्वर से याचना करना और इस का फल निरभिनाम आदि होता है ।

तू जनों की ज्योति है

नि त्वामग्ने मनुर्दधे, ज्योतिर्जनाय शश्वते।
दीदेथ कण्व ऋतजात उक्षितो, यं नमस्यन्ति कृष्टयः ।। ऋग्वेद१।३६।१९

ऋषिः **कण्वः घौरः** । देवता **अग्निः** । छन्दः बृहती ।

(**अग्ने**) हे अग्रणी परमात्मन्! (**मनुः**) मननशील मनुष्य (**त्वां**) तुझे (**नि दधे**) [**हृदय में**] निहित करता है। [तू] (**शश्वते**) सनातन (**जनाय**) [**आत्मारूप**] जन के लिए (**ज्योतिः**) ज्योति [है]। (**ऋतजातः**) सत्य के द्वारा प्रकट, (**उक्षितः**) [**आत्मसमर्पण की हवि से**] सिक्त [तू] (**कण्वे**) मेधावी के अन्दर (**दीदेथ**) प्रदीप्त होता है, (**यं**) जिसे (**कृष्टयः**) साधक-जन (**नमस्यन्ति**) नमस्कार करते हैं।

• हे अग्निस्वरूप अग्रणी परमात्मन्! जैसे यजेमान अरणि-मन्थन के द्वारा यज्ञाग्नि को प्रकट कर यज्ञकुण्ड में निहित करता है, वैसे ही मननशील मनुष्य तुम्हें अपने हृदय में निहित करता है। जैसे अरणियों में पहले से ही विद्यमान अग्नि को भी मन्थन के द्वारा प्रकट करना पड़ता है, ऐसे ही यद्यपि तुम प्रत्येक के हृदय में पहले से ही वर्तमान हो, तो भी ध्यान-रूप मन्थन से तुम्हें प्रकट करने की आवश्यकता होती है। पूर्व ही सर्वत्र विद्यमान तुम्हारे विषय में 'हृदय में निहित करना' आदि भाषा-प्रयोग तुम्हें उद्बुद्ध या प्रकट करने के अर्थ में ही हम करते हैं। जब तुम हृदय में निहित या प्रबुद्ध हो जाते हो, तब सनातन जीवात्मा के लिए दिव्य ज्योति का काम करते हो, अँधियारे तमस् में तुम्हारी प्रकाश-रेखा उसे जीवन-पथ दर्शाती है।

हे प्रकाशक प्रभु! तुम 'ऋतजात' हो, सत्य से प्रकट होते हो। जब तक मन सत्य के द्वारा निर्मल नहीं हो जाता, तब तक उसमें तुम्हारे चरण नहीं पड़ते। मन में असत्य को धारण किये रखकर देवार्चना के विषय में सोचना आत्म-प्रवंचना करना और जगत् को छलना है। जब तुम 'कण्व' की, मेधावी साधक की मनोवेदि में सत्य के द्वारा व्यक्त हो जाते हो और उसके आत्म-समर्पण की घृताहुति से सिक्त होते हो, तब तुम्हारी आभा दर्शनीय होती है। तब ऊँची-ऊँची ज्वालाओं से देदीप्यमान होती हुई यज्ञाग्नि के समान तुम अदभ्र ज्योतिवाले प्रकाशपुंज के रूप में दिखाई देते हो। तुम्हारी उस जगमग ज्योति के प्रति कृष्टि-जन, योग-साधना की कृषि करने वाले साधक-जन, शतशः नमस्कार करने लगते हैं। हे तेजोमय प्रभु! अपनी वह दिव्य ज्योति हम 'कण्वों' के हृदयों में भी उद्भासित करो, हमें भी अपना कृपापात्र बनाओं, हमारे भी तमोजाल को निरस्त करो। हम भी 'मनु' बनकर तुम्हें अपनी हृदय-वेदि में निहित कर रहे हैं, अग्न्याधान कर रहे हैं। (वेद मञ्जरी से)

(मुम्बई में आर्यसमाज की स्थापना के समय बनाए गए २८ नियमों पर लेखक द्वारा डाले प्रकाश को अपने इस पत्रिका के जून २०१७ के अंक में पढ़ा । इन २८ नियमों में १० नियम बनाने की आवश्यकता क्यों पड़ी विद्वान् लेखक ने इसे प्रथम अनुच्छेद में ही बताया है । अन्य आवश्यक बातें उपनियमों के रूप में संकलित की गई । शेष लेखक के शब्दों में पढ़े ।)

आर्यसमाज का इतिहास

नियमों की दृढ़ नींव

-पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति

(साथ में स्वामीजी द्वारा ब्रह्मचर्य के बल का नमूना)

आर्यसमाज के नियमों का दूसरा संस्करण करने का क्या निमित्त था ? यह एक आवश्यक प्रश्न है। ऋषि दयानन्द ने बम्बई के नियमों में परिवर्तन की आवश्यकता समझी, यह बात बिना निमित्त के नहीं हो सकती। परिवर्तन की आवश्यकता का प्रथम प्रयोजन यह प्रतीत होता है कि नियमों को कुछ अधिक स्पष्ट कर दिया जाय। बम्बई के नियमों में न जाने क्या-क्या मिला हुआ है ? आर्यसमाज का उद्देश्य, समाज का संगठन, अधिवेशनों की कार्यवाही, पत्रों का निकालना, सभासदों की योग्यता आदि गौण और मुख्य, व्यापक और स्थानीय सभी प्रकार की बातें मिला कर भर दी गई थी। आवश्यक था कि मुख्य को गौण से तथा व्यापक को स्थानीय से जुदा कर दिया जाये। लाहौर के दस नियमों में केवल उन्हीं बातों के समावेश का यत्न किया गया है, जो मुख्य और व्यापक हैं। बम्बई के नियमों का 19वाँ नियम कहता है कि इस समाज की ओर से श्रेष्ठ विद्वान् लोग सर्वत्र सदुपदेश करने के लिए भेजे जाएंगे, यह एक गौण नियम है। यह प्रत्येक समाज की शक्ति पर अवलम्बित है कि वह प्रचार के लिए उपदेशकों को बाहर भेज सकता है या नहीं ? हरेक समाज के लिए यह नियम नहीं बन सकता कि वह उपदेशक रख कर बाहर प्रचार कराए। इस प्रकार के नियम लाहौर में स्वीकृत नियमों में से निकाल दिए गए हैं।

लाहौर में स्वीकृत नियम अधिक व्यापक हैं। उनमें विचारों की अधिक उदारता पाई जाती है। उनके निर्माता का दृष्टिकोण विस्तृत हो गया। बम्बई वाले नियम बम्बई के उस समय के सामान्य विचारों के प्रतिबिम्ब थे, लाहौर वाले नियम हृदय तथा प्रतिभा के विकास को सूचित करते हैं । बम्बई वाले नियमों में ईश्वरके स्वरूप का प्रतिपादन नहीं। लाहौर वाले नियम वस्तुतः ईश्वर-विश्वास की मजबूत नींव पर रखा गया है । लाहौर के नियम सिद्ध करते हैं कि ऋषि दयानन्द अन्य सब विश्वासों की अपेक्षा ईश्वर-विश्वास को अधिक आवश्यक समझते थे । वे बहुत-सी बुराइयों की जड़ ईश्वर-सम्बन्धी उलटे विचारों को ही मानते थे । उन्होंने अपने जीवन का एक विशेष उद्देश्य यह माना हुआ था कि लोगों के ईश्वर-सम्बन्धी विचारों का सुधार किया जाए । बम्बई में बने नियमों मेंयह बात अच्छी तरह नहीं सूचित होती थी । लाहौर में वह त्रुटि पूरी कर दी गई । उद्देश्य पर ध्यान दें तो भी व्यापकता की वृद्धि पाई जाती है । छठा नियम यह है - "संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना ।" उद्देश्यों में से स्थानीयता निकल गई हैं, ऋषि का दृष्टिकोण विस्तृत हो गया है। वे आर्य

जाति का सुधार इसलिए नहीं करना चाहते कि वे केवल आर्यजाति की भलाई चाहते हैं, वे आर्यजाति को सुधार कर संसार के उपकार का साधन बनाना चाहते हैं।

तीसरा भेद, जिसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है, यह है कि ईश्वरीय ज्ञान की व्याख्या अधिक विस्तृत और उदार हो गई है । पहला नियम बतलाता है कि सब सत्य विद्या और जो पदार्थ सत्यविद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है । कितनी उदार और संकोचहीन व्याख्या है । ईश्वर के ज्ञान की सीमाएँ नहीं बांधी गई । सर्वज्ञ और असीम भगवान् के ज्ञान के चारों ओर रेखा खींची भी नहीं जा सकती । सब सत्य विद्या का आदि मूल परमेश्वर है । विद्या-रूपी वृक्ष का तना है, शाखायें हैं, पत्ते, फूल और फल सब हैं । परमात्मा उनका आदि मूल है । आदि मूल तभी हो सकता है, जब वृक्ष की सम्भावना मान ली जाए। इस प्रकार अपरिमित ज्ञान-रूपी कल्पवृक्ष का मूल परमात्मा को माना गया है । परमात्मा का ज्ञान भी अपरिमित है । अपरिमित का मूल अपरिमित ही हो सकता है । जो मतवादी ईश्वर के असीम ज्ञान-भंडार को एक, दो या अधिक कमरों में बन्द समझना चाहते हैं, उन्हें स्वामी दयानन्द के उदार विचार पर ध्यान देना चाहिए । पहला नियम अनुदारता की जड़ पर कुठाराघात करता है । वह पन्थाई-पन का कट्टर शत्रु है । वह उन लोगों के दावे को छिन्न-छिन्न कर देता है, जो ईश्वरीय ज्ञान के ठेकेदार बनना चाहते हैं।

कई महानुभावों का यह दावा था कि स्वामी जी को उन्हीं ने नियम परिवर्तन में प्रेरित किया और जो भेद दिखाई देता है वह उन्हीं की उदारता का फल है। प्रेरणा किसी की ओर से हो, इसमें सन्देह नहीं कि जो भी परिवर्तन किया गया, वह स्वामी जी की अनुमति से किया गया। यदि उन नियमों में अधिक उदारता है तो ऋषि दयानन्द के विचारों की उदारता ही उसमें कारण है। यदि किसी को ऊपर दिए नियमों से उदारता का भली-भाँति पता न लगे तो वह निम्नलिखित नियमों पर दृष्टिपात करे। निश्चय है कि उसका भ्रम दूर हो जायेगा-

(4)''सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।''

क्या एक धर्म का संस्थापक अपने अनुयायियों के लिए इससे अधिक उदार नियम भी बना सकता है?

(10) ''प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।''

लाहौर वाले दसों नियमों में एक असीम सत्य-प्रेम, एक अनन्त उदार-हृदयता और एक व्यापक उद्देश्य की सूचना मिलती है। जिस आत्मा में इन तीनों गुणों का निवास हो, यदि उसे 'ऋषि' न कहें तो और किसे कहें?

रविवार 24 जून, 1877 के दिन लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना हुई । समाज के अधिवेशनों के लिए एक मकान किराये पर ले लिया गया। ऋषि दयानन्द उसमें प्रति सप्ताह धर्मोपदेश दिया करते थे। समाज के प्रधान लाला मूलराज जी एम.ए. और मन्त्री लाला साईंदास जी नियत हुए। कई भक्तों ने ऋषि से प्रार्थना की- '' आप आर्यसमाज के गुरु या आचार्य पद को ग्रहण करें।''

ऋषि ने उत्तर दिया- ''इस प्रस्ताव से मुझे गुरुपन की बू आती है। मेरा उद्देश्य तो गुरुपन की जड़ काटना है, जिससे मुझे घृणा है।''

तब दूसरे भक्त ने प्रस्ताव किया-''यदि स्वामी जी आचार्य या गुरु नहीं बनना चाहते तो कम से कम 'आर्यसमाज के परम सहायक' की पदवी को तो अवश्य ही स्वीकार करें ।'' ऋषि का उत्तर प्रश्न के रूप में था । आपने पूछा कि यदि मुझे आर्यसमाज का परम सहायक कहोगे तो परमात्मा को क्या कहोगे ? फिर यही विचार कर कि आर्यपुरुष सर्वथा इन्कार से उदास न हों,समाज के सहायकों में नाम लिखना अंगीकार कर लिया । यही ऋषि दयानन्द का ऋषिपन था । जिन लोगों को मौका मिला, वे पैगम्बर और रसूल बनने में नहीं कतराये । जिन्हें इतनी बड़ी हिम्मत न हुई, वे आचार्य या नबी बन गए । ऋषि का ही हृदय था कि आचार्य, गुरु या परम सहायक तक के पदों का न स्वीकार किया । कारण यही था कि ऋषि दयानन्द अपने को परमात्मा के ज्ञान का प्रचारक, सत्य का साधन मात्र समझते थे, इससे अधिक कुछ नहीं । वहॉ न बड़प्पन की चाह थी, और न गुरुपन की बू । वहाँ तो एक ईश्वर पर विश्वास था और सत्य पर अटल श्रद्धा थी । यही कारण था कि इस वीर की एक ही गरज से सदियों के खड़े किए हुए गुरुडम के गढ़ हिल जाते थे । यदि ऋषि में अपनी बड़ाई या लौकिक बढ़ती की कुछ भी कामना होती तो उन्हें ऐसी अद्‌भुत सफलता प्राप्त न होती ।

लाहौर में नियम और उप-नियम जुदा कर दिए गए थे। उप-नियम अन्तरंग सभा ने बनाये थे। जिस समय अन्तरंग सभा में उप-नियमों पर विचार हो रहा था, स्वामी जी आकस्मात् वहाँ पहुँच गए। सभासदों ने प्रस्तुत विषय पर स्वामी जी की सम्मति मांगी। ऋषि ने कहा-''मैं आपकी अन्तरंग-सभा का सभासद् नहीं हूँ, इसलिए मुझे सम्मति देने का अधिकार नहीं है।''

सर्वसम्मति ने उसी समय स्वामी जी को अन्तरंग सभा का प्रतिष्ठित सभासद् बना दिया। उप-नियम तैयार हो जाने पर स्थानीय समाज का संगठन पूरा हो गया। समाज मन्दिर में नियमपूर्वक अधिवेशन होने लगे। इस प्रकार लाहौर के कार्य से निश्चिन्त होकर ऋषि ने प्रान्त में भ्रमण आरम्भ किया।

आपने अमृतसर, गुरुदासपुर, जालन्धर, फीरोजपुर छावनी, रावलपिण्डी, गुजरात, वजीराबाद, गुजरांवाला तथा मुल्तान छावनी आदि में पधार कर सदुपदेश दिए। प्राय: आपके पहँचते ही आर्यसमाज की स्थापना हो जाती थी। आर्यसमाज की स्थापना से पौराणिक गढ़ में और पादरी दल में भी हलचल पैदा हो जाया करती थी। सभी स्थानों पर इधर पौराणिकों से और उधर पादरियों से संग्राम करना पड़ता था। पंजाब का पौराणिक दल पण्डितों से बिल्कुल शून्य था। प्रान्त भर में कोई भी अच्छा पण्डित नहीं था। वेद का ज्ञान तो कहाँ, अर्वाचीन संस्कृत का भी कोई अच्छा ज्ञाता मिलना कठिन था। यही कारण था कि पंजाब में पौराणिक काल दल की ओर से अधिक सभ्यता का व्यवहार नहीं होता था। वे लोग पाण्डित्य का स्थान भी गाली-गलौज और ईंट-पत्थर से पूरा करना चाहते थे। अमृतसार, वजीराबाद आदि शहरों में, व्याख्यानों या शास्त्रार्थों के अवसरों पर, गाली और पुस्तकों-प्रमाणों के स्थान में कंकर-पत्थरों के प्रयोग को काफी समझा जा रहा था। पादरियों के साथ शास्त्रार्थ कम हुए परन्तु उनके प्रभाव में फँसे हुए बहुत से अबोध

शिकार ऋषि दयानन्द ने बचाए।

पंजाब के दौरे की कुछेक घटनायें ऋषि दयानन्द के चरित्र का अच्छा चित्रण करती हैं। जब वे अमृतसर में उपदेश कर रहे थे, पादरी क्लार्क उनके पास आए। पादरी साहब ने स्वामी जी को एक ही मेज पर भोजन करने के लिए आमन्त्रित किया। स्वामी जी ने पूछा–''इकट्ठे भोजन से क्या लाभ होगा ?''

पादरी महाशय बोले–''इकट्ठे खाने से परस्पर प्रीति बढ़ जाएगी।''

इस पर स्वामी जी ने कहा–''शिया और सुन्नी एक ही बर्तन में खाते हैं। रूसी और अंग्रेज, इसी तरह ही आप और रोमन–कैथोलिक ईसाई एक ही मेज पर जीम लेते हैं, परन्तु सब जानते हैं, कि इनमें परस्पर कितना बैर है, एक–दूसरे के साथ कितनी शत्रुता है।''

सरदार दयालसिंह मजीठिया अमृतसर के प्रसिद्ध रईस थे। वे ब्राह्मसमाजी थे। वे प्रायः वेदों पर शंकायें किया करते थे। बातचीत करने में वे प्रायः आपे से बाहर हो जाते और किसी नियम का पालन नहीं करते थे। एक बातचीत में वे बहुत तेज हो गए। स्वामी जी ने उन्हें बार–बार समझाया कि आप निश्चित समय तक बोला कीजिए और प्रतिवादी को भी बोलने मौका दीजिए। तब भी सरदार साहब शान्त न हुए। तब स्वामी जी ने कहा–''यदि आप निर्णय ही कराना चाहते हैं तो केशवचन्द्र जी को बुलाकर बातचीत करा लीजिए।''

गुरुदासपुर में ऋषि दयानन्द के व्याख्यान सुनने इंजीनियर मि.काक भी आया करते थे। एक दिन व्याख्यान देते हुए आपने कहा कि–''अंग्रेज लोगों को इस देश में आए बहुत चिर हो गया है। परन्तु इन लोगों ने अपने उच्चारण को अब तक नहीं सुधारा। तकार के स्थान पर टकार ही बोलते हैं।''

काक महाशय रुष्ट हो गए और यह कहते हुए चले गए –''यदि तुम पश्चिम में पेशावर की ओर चले जाओ तो तुम्हे मजा आ जाय।''

काक महाशय का अभिप्राय यह था कि स्वतन्त्रता से बोलना अंग्रेजी राज्य में ही सम्भव है। ऐसा तर्क प्रायः किया जाता है, परन्तु तर्क करने वाले लोग भूल जाते हैं कि अंग्रेजी राज्य से पूर्व भी भारतवर्ष में स्वाधीन क्रिया के लिए बहुत अधिक रास्ते खुले थे।

जालन्धर में ऋषि दयानन्द सरदार विक्रमसिंह के यहाँ ठहरे हुए थे। सरदार जी ने स्वामी जी से ब्रह्मचर्य के बल की बाबत पूछा। स्वामी जी ने बतलाया कि 'ब्रह्मचर्य' से अतुल बल की प्राप्ति हो सकती है। सरदार साहब को विश्वास न हुआ, और सबूत मांगने लगे। स्वामी जी उस समय चुप रहे। सांझ के समय सरदार साहब अपनी गाड़ी में बैठकर बाहर चले। गाड़ी में बड़ी बढ़िया जोड़ी जुती हुई थी। कोचवान ने लगाम संभाली और चाबुक हिलाया। जो जोड़ी इशारा पाते ही हवा से बातें करती थी, वह केवल अपने अगले पांव उठाकर रह जाती थी। कोचवान झुंझला गया, सरदार साहब आश्चर्य से इधर–उधर देखने लगे। पीछे दृष्टि पड़ी तो देखा कि स्वामी जी गाड़ी को पकड़ कर मुस्करा रहे हैं। सरदार साहब को ब्रह्मचर्य के बल का एक नमूना मिल गया और स्वामी जी ने हँसकर गाड़ी को छोड़ दिया।

पंजाब में भ्रमण के समय ऋषि दयानन्छ वेदभाष्य लिखा करते थे, इस कारण उनके साथ दो–तीन

पण्डित रहते थे। पत्र-व्यवहार के लिए एक लेखक रहता था। आप प्रायः आर्योद्देश्य रत्नमाला में क्रम से दिये हुए लक्षणों में से एक -एक को लेकर उसकी व्याख्या किया करते थे। सब व्याख्यान शास्त्रीय होते थे। शास्त्रीय विषय के प्रसंग से सामाजिक दोषों का खण्डन भी करते जाते थे। धार्मिक, सामाजिक या राजनीतिक सभी प्रकार के दोषों की मीमांसा हो जाती थी। सभी प्राकर की बुराइयों पर सुदर्शनचक्र घूम जाता था। किसी भी जीवित शक्ति का लिहोज नहीं किया जाता था। ऋषि दयानन्द की दृष्टि में दो ही वस्तुए थीं- एक सत्य, दूसरी असत्य। सत्य का मण्डन और असत्य का विरोध यह उनका धर्म था। वहाँ न प्रजा का लिहाज था न राजा का भय था। संसार की हर प्रकार की भलाई करना उनका लक्ष्य था।

अपने निवास स्थान पर स्वामी जी साधारण वेष में रहते थे, परन्तु व्याख्यान के समय सिर पर रेशमी पीताम्बर, नीचे पीली रेशमी धोती और ऊपर ऊनी चोगा पहनते थे। शरीर सुडौल और लम्बा था। चेहरा पूर्ण चन्द्र के समान भरा हुआ और तेजस्वी आंखों से तेज बरसता था। यह प्रभावयुक्त मूर्त्ति थी, जिसने थोड़े ही दिनों में पंजाब भर में धार्मिक हलचल पैदा कर दी, और भ्रमात्मक विचारों का महल हिला दिया।

आर्य समाज मगरा पूंजला का वेद प्रचार कार्यक्रम

आर्य समाज मगरा पूंजला जोधपुर द्वारा तीन दिवसीय वेद प्रचार कार्यक्रम 17 से 19 जुलाई 2017 तक आयोजित किया गया। समाज के प्रधान श्री संपत राज जी देवड़ा ने बताया कि इस अवसर पर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा विद्यालयों में आयोजित विद्यार्थी व्यक्तित्व उन्नयन एवं सम्प्रेशण कौशल शिविर में मॉ भारती विद्या मंदिर उच्च माध्यमिक विद्यालय, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय चैनपुरा, सुनिता बाल निकेतन उच्च, माध्यमिक विद्यालय, मॉ शारदा उच्च माध्यमिक विद्यालय, राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय तथा विलियम एकेडमी सीनियर सेकेंडरी स्कूल में लगभग १५00 विद्यार्थियों को राष्ट्रभक्ति, वैदिक संस्कृति, स्वास्थ्य संबंधी जानकारी एवं आसन प्राणायाम का प्रशिक्षण आर्य वीर दल राजस्थान के संचालक श्री सत्यवीर जी आर्य, अलवर द्वारा दिया गया। श्री आर्य ने विद्यार्थियों को महर्षि मनु प्रणीत धर्म के दस लक्षणों के बारे में बताया और कहा कि धर्म का प्रथम लक्षण धैर्य है जिसकी कमी के कारण आज का युवक थोड़ी सी भी विपरीत परिस्थिति अथवा समस्या के आगे घुटने टेक कर आत्महत्या कर लेता है, जो कि बहुत बड़ा पाप है। वस्तुतः संघर्ष ही जीवन है एवं जीवन में सफल होने के लिए एक ही लक्ष्य निर्धारित कर उसके मार्ग में आने वाली बाधाओं को पार करके लक्ष्य प्राप्त करना चाहिए, ना कि बार बार अपना मार्ग या लक्ष्य बदलना। जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए लक्ष्य प्राण वायु की तरह जरूरी है.

श्री आर्य ने विद्यार्थियों को बताया कि परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के आरंभ में वेद रूपी ज्ञान मानव मात्र के लिए दिया– जो मानव जीवन को सार्थक बनाता है। विद्यार्थियों को आर्य समाज में जाकर जीवन के लक्ष्य को पहचानना चाहिए. विद्यार्थी प्रतिदिन संध्या करें, आसन प्राणायाम द्वारा शरीर को स्वस्थ रखें, आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती के अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश का स्वाध्याय करें एवं आडंबरों से बचें, तभी स्वयं की और राष्ट्र की उन्नति कर सकते हैं। कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु समाज के प्रधान श्री संपतराज देवड़ा एवं उपप्रधान श्री हरिसिंह सॉखला ने विशेष रूप से सक्रिय भागीदारी की।

रक्षाबन्धन का सन्देश (श्रद्धा ३ सितम्बर १९२०)

-स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज

माता का पुत्र पर जो उपकार है उसकी संसार में सीमा नहीं। यही कारण है कि हर समय और हर देश में मातृशक्ति का स्थान अन्य शक्तियों से ऊँचा समझा जाता है। जहाँ ऐसा नहीं है वहाँ सभ्यता और मनुष्यता का अभाव समझा जाता है।

जब वह मातृशक्ति ऊँचे स्थान पर रहती है तो वह श्रद्धा और भक्ति की अधिकारिणी होती है। और जब वह बराबरी पर आती है तो बहन के रूप में भाई पर प्रेम और रक्षा के अन्य साधारण अधिकार रखती है। एक सुशिक्षित सभ्य देश में देश की माताएँ पूजी जाती हैं, बहने प्रेम और रक्षा की अधिकारिणी समझी जाती हैं और पुत्रियाँ भावी माताएँ और भावी बहनें होने के कारण उस चिन्ता और सावधानता से शिक्षण पाती हैं, जो बालकों को भी नसीब नहीं होती। यह एक उन्नत और सभ्य जाति के चिन्ह है।

भारत के स्वतन्त्र सुन्दर प्राचीन काल में माताओं, बहनों और पुत्रियों का यथायोग्य पूजन रक्षण और शिक्षण होता था। यही कारण था कि भारत की महिलाएँ प्रत्युत्त में पुरुषों को आर्शीवाद देती थी, उन्हें नाम की अधिकारिणी बनाती थीं, उन्हें अपनी जन्म घुट्टी के साथ वीरता और स्वाधीनता का अमृत पिलाती थीं। उन्हीं पूजा पाई हुई माताओं का आर्शीवाद था जिस कारण भारतवासियों में आत्मसम्मान था। पाण्डव वीर थे, पर यह न भूलना चाहिए कि उन्हें अपना 'पांडव' यह उपनाम उतना प्यारा न था, जितना प्यारा 'कौन्तेय' था। राम का सबसे प्यारा नाम 'कौशल्या नन्दन' है। वे वीर माता के नाम से नाम कमाने को अपमान न समझते थे- उसे अधिक अच्छा समझते थे, और यही कारण था उन पर माताओं का आर्शीवाद फलता था।

राजपूतों में स्त्री जाति की रक्षा करना आवश्यक धर्म समझा जाता था। रक्षाबन्धन उसका एक अधूरा शेष है। यह दिन बहिन और भाई देश की अबलाओं और वीर पुरुषों के परस्पर रक्षा-रक्षक सम्बन्ध को दृढ़ करने का दिन है। जब भारत में स्वाधीनता आत्म सम्मान और यश का कुछ भी मूल्य समझा जाता था, तब देश के नवयुवक अपनी देश-बहिनों की मानमर्यादा की रक्षा के लिए प्राणों की बलि देने में अपना अहोभाग्य समझते थे।

परन्तु आज क्या दशा है? पाठक यह समझकर विस्मित नहीं हों कि हम अब स्त्री शिक्षा और विधवा विवाह का रोना लेकर बैठेंगे। यह रोना रोते-रोते आधी सदी बीत गई-और अब उसका असर देश के सभी विचारशीलों पर है। हम तो आज अपने पाठकों को केवल यह अनुमान कराना चाहते हैं कि स्त्री जाति के प्रति भारतवासियों के जो वर्तमान भाव हैं वह कितने हीन और तुच्छ हैं। यह याद रखना चाहिए कि जो जाति माताओं को इतना हीन और तुच्छ समझती है, वह दासता की ही अधिकारिणी है। हमारे हरेक व्यवहार में हमारे शहरों और गाँव के हरेक कोने में असभ्य और सभ्य नागरिकों के मुँह में दिन-रात माताओं और बहनों का नाम लेकर गालियाँ निकलती हैं। लड़ाई आदमी से, गाली और बेइज्जती माँ और बहन के लिए।

यदि किसी दूसरे को बदनाम करना है तो उसका सबसे सरल उपाय उसकी बहिन या लड़की को बदनाम करना समझा जाता है। सामाजिक स्थिति में स्त्रियों को अछूतों से बढ़कर गिना जाता है। हमारी सभा सोसाइटियों के योग्य उन्हें नहीं समझा जाता।

स्त्री जाति पर शत्रु का आक्रमण एक ऐसी घटना हुआ करती थी कि उस पर हमारे वीर पुरुषों के ही नहीं, साधारण लोगों के भी खून उबल पड़ते थे। राम ने रावण को मारा, अपनी स्त्री की रक्षा के लिए। पांडवों ने कुरुकुल का संहार किया– द्रौपदी के अपमान का बदला लेने के लिए। राजपूतों में कितने युद्ध केवल महिलाओं की मान रक्षा के लिए हुए और फिर महिलाएँ भी अपनी निज बहिन या बेटी नहीं–अपितु जाति की। आज हम लोग अपनी माताओं और बहिनों के लिए गन्दी से गन्दी गालियाँ सुनते हैं और चुप रहते हैं। विदेशी लेखक और समाचार पत्रों और ग्रन्थों में हमारी स्त्री जाति के लिए निरादर सूचक शब्द लिखते हैं और हम उन्हें पढ़कर चुप रहते हैं। इतना ही नहीं, पिछले साल की मार्शलला की घटनाओं को याद कीजिए। एक विदेशी अफसर आता है और भारत पुत्रियों और माता को गाँव से बाहर बलात् बुलाता है, उनका पर्दा अपनी छड़ी से उठता है, उन पर थूकता है, उन्हें गन्दी गालियाँ देता है और भारतवासी है, जो इस पर प्रस्ताव पास करते हैं। क्या किसी जीवित जाति में स्त्रियों पर ऐसा अत्याचार सहा जा सकता था? क्या किसी जानदार देश में ऐसा अपमान करने वाला व्यक्ति एक मिनट भी रह सकता है? हम पूछते हैं कि क्या राम के समय के क्षत्रिय, क्या भीम और अर्जुन, क्या हम्मीर और सांगा के समय के राजपूत, और क्या शिवाजी के मराठे ऐसें जातीय अपमान को क्षण–भर भी सहते? क्या भारत की भूमि ऐसे तिरस्कार के पीछे भी शान्त रहती? कभी नहीं, उसमें वह भूडोल आता जिसमें शासक का दर्प और पापी का पाप चकनाचूर हो जाता। यह आत्मसम्मान का भाव इस अभागे देश में बाकी नहीं रहा। माताओं और बहनों के लिए यह अतुल भक्ति और प्रेम का भाव अब भारतवासियों में नहीं रहा। रक्षाबन्धन उन्हीं भावों का चिन्ह था। आज भी वह कुछ संदेश रखता है। आज भी वह अबला की पुकार देशवासियों के कानों में डाल सकता है– पर यदि कोई सुनने वाला हो। जिनके कान हैं वह रक्षा बन्धन के सन्देश को और अबलाओं की पुकार को सुन सकते है। यदि वह भी नहीं सुन सकते, तो फिर हे देशवासियों! अपने भविष्य से निराश हो जाओ। तुम्हारे जीने से न कोई भला है और न उसकी कोई आशा है। जिस जाति के पुरुष अपनी माताओं, बहिनों और पुत्रियों के मान की रक्षा नहीं कर सकते, वह जाति इस भूतल से धुल जाने के ही योग्य है।

सुख-दुःख की समस्या

(वैदिक दर्शनः षष्ठम पुष्प)

-चमूपतिजी एम.ए.

पुनर्जन्म

हम अपने भाग्य का निर्माण आप करते हैं। कैसे उत्तम भाव हैं! इन सब भावों का प्रादुर्भाव पुनर्जन्म के सिद्धान्त से सम्बद्ध है। वेद कहता है-

यहईं चकार न सो अस्य वेद य ईं ददर्श हिरुगिन्नु तस्मात्।

स मातुर्योना परिवीतो अन्तर्बहुप्रजा निर्ऋतिमा विवेश।। - ऋ.१।१६४।३२

जिसने इस (गर्भस्थ) को बनाया है (अर्थात् पिता-माता) वह इसे नहीं जानता। जो इसे देखता है (अर्थात् परमात्मा) वह इससे छिपा हुआ है। वह माता की योनि में लिपटा हुआ बहुत जन्मों को प्राप्त होकर भोग को प्राप्त होता है।

जीवो मृतस्य चरति स्वधाभिरमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः।

मरणधर्मा शरीर का अमर जीवन अपनी इच्छा से मरनेवाले (शरीर) के साथ सयोनि होकर गमनागम करता है।

कइयों का विचार है कि इस जीवन की समाप्ति पर एक नये जीवन का आरम्भ होता हैं। उसमें कुकर्मियों को अनन्त दण्ड और सुकर्मियों को उनके सुकृत का अनन्त फल मिलता है। सान्त कर्म का अनन्त फल युक्ति-युक्त नहीं, इस वाद पर 'अंधेर नगरी चौपट राजा' वाली कहावत ही चरितार्थ होती है। कइयों ने अनन्त दण्ड के अत्याचार को तो समझ लिया है, परन्तु अनन्त सुख-भोग में उन्हें आपत्ति नहीं। इसे वे परमात्मा की दया का परिणाम समझते हैं। यह मत कर्म-भीरुओं का ही हो सकता है। परमात्मा स्वभाव से दयालु हैं। स्वयं कर्म-व्यवस्था उनकी दया है। पुण्य और पाप का फल भौतिक भी है, यह अध्यात्म-वादियों के लिए महान् सन्तोष का कारण है। इसी में उनका प्रायश्चित्त है। किसी पाप के लिए दु:ख न भोग केवल उसकी वासना में रहना पड़े, अध्यात्म-दृष्टि के अभ्यासियों को यह असह्य है। यदि बिना निमित्त दया के ही आश्रय से रहना है तो कर्म-फल का झंझट ही उड़ा देना चाहिए। कुछ समय के लिए भी पापियों को नरक का द्वारा क्यों दिखाना? जो दया इस अस्थायी नरक के होने से बाधित नहीं होती, वह स्वर्ग के अस्थायी होने से भी बाधित न होगी। स्वर्ग वही है जो हम सुखविशेष के रूप में इस संसार में भोगते हैं।

पुनर्जन्म की कई प्रत्यक्ष साक्षियाँ आए-दिन प्राप्त होती रहती हैं। थोड़े-थोड़े समय पीछे

कोई-कोई बालक ऐसा उत्पन्न होता है जो अपने पिछले जन्म की स्मृतियाँ साथ लाता है।[1] ऐसे बालक भी देखने में आते हैं जो बिना सिखाए छोटी-सी अवस्था में किसी कला-विशेष, यथा गान, गणित कविता इत्यादि में निपुण पाए गए हैं। वैज्ञानिकों के इन परीक्षणों का समाधान पुनर्जन्म के अतिरिक्त क्या है? क्या अल्पवयस्क मनुष्यों के ये चमत्कार-पूर्ण करतब सुख-विशेष नहीं?

एल.ई.ट्रिष्टम ने दिसम्बर १९२४ के 'थियोसोफिस्ट' में "चमत्कारी बालक" शीर्षक लेख छपवाया था जिसका कुछ उद्धरण अनुवादक के शब्दों में नीचे दिया जाता है-

न्यूयॉर्क ईवनिंग पोस्ट से उद्धृत-

रागी बालक

रागविद्या के क्षेत्र में एक छोटा-सा बालक सबको आश्चर्य में डाल रहा है। उसने आठ वर्ष की

---

१. राय बहादुर सुन्दरलाल ने 'लीडर' (अगस्त १९२३) में लेख छपवाया था जिसका भावानुवाद नीचे दिया जाता है-

मुझे कई वर्षों से पूर्वजन्म के सम्बन्ध में ऐसे प्रमाणों को ढूँढने का अवसर मिला है जिनसे कि कई स्त्रियों व पुरुषों के अपनी पिछले जन्म की घटनाओं का स्मरण रखने की साक्षी मिली है। उनमें से प्रायः कई यथावसर पत्रों में प्रकाशित होते रहे हैं। अभी हाल में ही भरतपुर रियासत में एक ऐसी घटना हुई है जिसकी ओर महाराजा भरतपुर ने मेरा ध्यान आकर्षित किया। इस विषय की खोज भी महाराजा के अधीन हुई है। अतः मैं उसका संक्षिप्त वृत्तान्त (जैसाकि महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी से प्राप्त हुआ) नीचे लिखता हूँ-

प्रभु नाम का एक ब्राह्मण लड़का था जो खैराती ब्राह्मण सलीमपुर (भरतपुर रियासत) का रहने वाला था। इसकी आयु ४ वर्ष की थी और वह अपने पूर्वजन्म की हालत को याद करता था। महाराजा भरतपुर की कृपा से मेरा ध्यान अगस्त १९२२ को इसकी ओर आकर्षित किया गया। नायब तहसीलदार द्वारा मार्च १९२३ के दिन बच्चे के अपने ही घर पर जाकर उसके हालात का पता लगाया गया। उसका विवरण नीचे दिया जाता है-

(१) मैं अपने पूर्वजन्म में भरतपुर गॉव हत्योरी का रहनेवाला हरबक्ष ब्राह्मण था।

(२) घुरी और श्यामलाल नाम के मेरे दो लड़के और कोकिला और भोली नाम की मेरी दो लड़कियाँ थी, जिनका विवाह क्रमशः खेरली-निवासी रहमत और वावर-निवासी गोकुल के साथ हुआ था। मैंने पहली लड़की के विवाह के लिए कुछ धन लिया था, परन्तु दूसरी का विवाह बिना कुछ लेने के किया।

(३) मेरे अपने रहने के लिए हत्योरी में एक पक्की हवेली थी।

(४) मेरे घर से मिलता हुआ स्वरूपा जाट का घर था।

(५) स्वरूपा जाट के एक लड़का और लड़की थी।

(६) वहाँ पत्थरों से चिनी हुई एक उठी हुई सड़क (Pathway) थी।

(७) वहाँ एक पक्का तालाब था जिसमें एक मकान खड़ा था ओर तालाब के ऊपर छत्री लगी हुई थी।

(८) (तालाब में) एक ओर छत पर दो मकान थे।

आयु में ही कई ऐसे गीत बनाए हैं, जिन्होंने कि डर्क फॉच (Dirk Foch) और थ्योडोर (Theodore) का भी ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है।

अमेरिकन ढंग के चेहरे से युक्त यह अद्‌भुत बालक निकोलिन जैडलर (Nicloine Zedeler) का लड़का है जो अब संसार की यात्रा को निकला हुआ है और अमेरिकन नेशनल ऑर्केस्ट्रा का प्रबन्धकर्ता है।

उसकी असाधारण योग्यता का पता कल उस समय लगा जब उसने मिस्टर Engel के घर पर गान किया। टैडी (Teddy) न केवल गान-विद्या में प्रवीण है अपितु एक अच्छा कवि और छोटी-छोटी कथाओं का लेखक भी है। इनके अतिरिक्त वह कई प्रकार की नई-नई खेलें भी खेलता है।

छोटे बालकों में से कईयों ने रागविद्या में अच्छा अभ्यास प्राप्त किया है। इनमें से मुख्यतम लॉरेंस लूइस लिंडग्रीन (Laurence Louise Lindgreen) है। यह सीटल (Seattle) में रहती है और उसकी आयु ३ साल की है । वाशिंगटन स्टेट म्यूजिक मैमोरी नामक साम्मुख्य में इसने १००/१०० अंक प्राप्त किये थे । यह पियानो पर कई कठिन-से-कठिन गीत निकाल सकती है । यह (Touch method)

(९) हत्योरी में पानी पीने के लिए निम्न कुएँ थे–

(क) पनहरीवाला– इसके पास दो पिप्पल के वृक्ष थे।

(ख) कंकर वाला– इसके पास बेर के वृक्ष थे।

(ग) मूलियाँवाला– इसके पास आम के वृक्ष थे।

(१०) भोरे गाँव का एक गुज्जर मेरा यजमान था।

(११) वहाँ किले के एक गुप्त स्थान पर एक साँप रहता है।

(१२) सम्वत् १९३४ के अकाल के साल में मैं अपने गाँव हत्योरी में था। मेरे पास एक बैल का जोड़ा था जिससे मैं खेती किया करता था।

(१३) मैं अपने पिता के जीवन-काल में ही अपने गाँव के बाहर के एक बँगले में मर गया था।

(१४) अपनी मृत्यु के बाद मैं आध्यात्मिक (परमात्मा के) संसार में रहा।

(१५) परमात्मा के मूछें और दाढ़ी थी।

(१६) परमेश्वर ने मुझे मेरी उत्पत्ति से वर्तमान स्थान सलीमपुर में जाने को कहा।

(१७) मेरी स्त्री का नाम गंजो था जिसका अर्थ गंजे सिर वाली है।

(१८) मेरे पिता का नाम मुंडे था। (१९) मेरा मामा वर्गमान में था।

(२०) मेरा श्वसुर बुटवारी में था।

(२१) एक बार मूला जाट मेरे कुएँ में गिर पड़ा जहाँ से कि मैंने उसे सुरक्षित निकाल लिया और उसका जीवन बच गया।

नोट– तहसीलदार लिखता है कि जब बच्चे की परीक्षा की जा रही थी तो बीच-बीच में वह हँसता रहता था और बच्चे की भाँति बातचीत करता था।

द्वारा टाइपराइटिंग पर भी तेज हाथ चला सकती है और चतुर्थ श्रेणी के योग्य 'रीडर्स' को भी अच्छी प्रकार पढ़ सकती है ।

मस्तिष्क सम्बन्धी विचित्रता

ऐनिड ओकलाहोमा (Enid Oklahoma) का बालक ऐनाबोल मॉरो (Annabel Morrow) बड़ा ही विचित्र बालक है । उसकी आयु अब ३ वर्ष की है । उसने इससे १८ महीने पहले पढ़ना आरम्भ कर दिया था और अब वह शरीर-विद्या, इतिहास और भूगोल के विषय में प्राय: सब कुछ जानता है । वह लेटिन में गिनती करता है और रागी है । वह उन पुस्तकों को अनायास ही पढ़ लेता है जिन्हें चतुर्थ श्रेणी में पढ़ाया जाता है, और इससे भी अधिक यह कि वह अपने पढ़े हुए को अच्छी प्रकार से याद कर सकता है ।

ऐसे ही लॉस ऐंजल्स हाई स्कूल में मॉरिस मर्फे नाम का ८ वर्ष का एक लड़का है । परीक्षा करने

घटना का पुनर्निरीक्षण

महाराजा भरतपुर के प्राइवेट सेक्रेटरी से उपर्युक्त वृत्तान्त की प्राप्ति पर मैंने उनसे प्रार्थना की कि बालक को उन-उन स्थानों पर ले-जाकर घटनाओं के सत्यासत्य का निर्णय करना चाहिये। मेरी प्रार्थना पर वीयर के नायब तहसीलदार द्वारा २३ अप्रैल १९२३ को बालक को हत्योरी गाँव में ले-जाया गया। नायब तहसीलदार की रिपोर्ट यह है-

प्राइवेट सेक्रेटरी और Palach Member के आदेशानुसार मैं बालक प्रभु को बैलगाड़ी द्वारा हत्योरी गाँव में ले गया। मैं वहाँ दिन-छिपे पहुँचा और गाँव से बाहर कुछ दूरी पर ठहरा। बालक से मैंने पूछा कि वह पक्का तालाब कहाँ हैं ? उसने उत्तर दिया कि ठीक गाँव के नीचे था, किन्तु मैं उसकी ठीक स्थिति नहीं बता सकता। और न ही वह उसकी तरफ चलने को उद्यत हुआ; अँधेरा था। हम गाँव की ओर चले और रात्रि वहीं बिताई।

अगले दिन मैंने प्रात; ही गाँव के निम्न मुखियों को इकट्ठा किया-

(१) धर्मसिंह फौजदार; आयु ६० वर्ष।

(२) फौजदार अजमतसिंह (गाँव का नम्बरदार); आयु ५० वर्ष।

(३) फौजदार रामसिंह ; आयु ७२ वर्ष।

(४) हरकण्ठ ब्राह्मण; आयु ४० वर्ष।

इनकी उपस्थिति में बालक की परीक्षा ली गई-

(I) उसने अपना नाम हरबक्ष और पिता का नाम मुंडे बताया। यह सत्य प्रमाणित हुआ।

(II) तब उसने कहा कि उसके तीन भाई थे-

(१) गिल्ला। यह जीता था जब हरबक्ष की मृत्यु हुई।

(२) चुन्नी उससे पूर्व ही मर चुका था। (३) तीसरे का नाम याद नहीं।

ग्रामवालों से खोज करने पर पता लगा कि हरबक्ष का केवल एक भाई शिववक्ष था। चुन्नी और गिल्ला उसके चाचा भोला के पुत्र थे जिनमें से कि चुन्नी हरबक्ष से पूर्व ही मर चुका था जैसा कि ऊपर कहा गया।

से पता लगा है कि उसकी मानसिक शक्ति २० वर्ष की आयु के मनुष्यों के बराबर है, अर्थात् इस अंश में यह मस्तिष्क-सम्बन्धी अद्भुत योग्यता रखनेवालों में से एक है । उसने बहुत समय पूर्व 'कान' द्वारा गायन किया था जो उसे किसी ने सिखाया नहीं था । उसको नक्षत्र-विद्या में बड़ा आनन्द आता है और उसका मन उस विषय को पहले से ही ग्रहण करता है जिन्हें कि कॉलेज के कई विद्यार्थी समझ भी नहीं सकते ।

परीक्षक कहता है कि वह बालक एक विषय में ही नहीं किन्तु सभी विषयों में प्रवीण है। वह खेलने में भी वैसी ही चतुरता प्रदर्शित करता है जैसा कि कार्य में । वह अपने आसपास रहनेवाले सब लड़कों से दौड़ने, लड़ने, तैरने, डुबकी लगाने में अधिक चतुर है । इन सब बातों के होते हुए भी बालकों की भांति वह चित्ताकर्षक भी है । वह अपने स्कूल में सर्व-प्रिय बालक है ।

(III) उसने अपने दो पुत्र-श्यामलाल (जो उससे पूर्व ही मर चुका था) और घूरे, तथा भोली और कोकिला नाम की दो लड़कियाँ बताई थीं जो कि सत्य प्रमाणित हुईं। इनके विवाह के विषय में उसने जो बात कही थी वह भी सर्वांश में सत्य सिद्ध हुई।

(IV) संख्या ३,४,५,६ में कही हुई बातें भी ठीक-ठीक प्रमाणित हुई। किन्तु हवेली खराब (उजाड़) अवस्था में है और पहाड़ की ओर से आने वाला रास्ता भी वैसा ही हैं ।

(V) कंकरवाला कुआँ अब सूखा पड़ा है और बहुत समय से काम में नहीं आ रहा। हरबक्ष के जीवन-काल में भी यह इसी प्रकार था। खोज करने से पता लगा कि पहले इस पर बेरी के वृक्ष थे जो अब नहीं है, किन्तु वहाँ एक पीपल का वृक्ष हैं

झसरोय वाला कुएँ पर एक आम और पीपल का वृक्ष है। पनिहार वाला कुएँ पर पीपल का वृक्ष है जैसाकि उसने बताया था। खेड़ा कुआँ पर कोई वृक्ष नहीं है। ये सब कथन सत्य प्रमाणित हुए।

(VI) संख्या १३ में कही बात सत्य सिद्ध नहीं हुई। नायब तहसीलदार की स्थानीय खोज बताती है कि हरबक्ष अपने पिता की मृत्यु के बाद गाँव के अपने घर में ही मरा था।

(VII) हरबक्ष की पूर्वजन्म की उत्पत्ति का ठीक वर्ष नहीं बताया जा सकता। यह कहा जाता है कि वह ५५ वर्ष का होकर १९६२ में मरा जिससे १९०७ वा १९०८ में उसके जन्म होने का पता लगता है।

(VIII) संख्या १२ में वर्णित घटना बिल्कुल सत्य सिद्ध हुई।

(IX) संख्या १९ में वर्णित घटना भी ग्राम-निवासियों की साक्षी द्वारा सत्य प्रमाणित हुई।

(X) संख्या २० में कथित बात भी सत्य सिद्ध हुई किन्तु वह उन परिवारों के सदस्यों के नाम नहीं बता सका।

(XI) संख्या १७ में कही बात भी सिद्ध हुई। उसने अपनी स्त्री का छोटा, हास्य का नाम 'गंजो' रखा हुआ था। खोज से पता लगा कि उसका वास्तविक नाम 'गौरा' था किन्तु गंजे सिर वाली होने के कारण उसने उसका नाम 'गंजो' रखा हुआ था।

(XII) संख्या २१ में वर्णित के विषय में कुछ निश्चय नहीं किया जा सका। इस विषय में किसी को कुछ स्मरण नहीं रहा था।

एवं नैथेली क्रेन (Nathalie Crane) नाम का एक बालक है जिसकी आयु अभी ११ वर्ष की भी नहीं, किन्तु उसकी कविताओं का प्रथम भाग प्रकाशित हो रहा है । Wonderchild नामक साम्मुख्यका विजेता ऐलबर्ट जे. हॉयत (Albert J. Hoyt) नाम का ७ वर्ष का बालक है । यह अपने ढंग का विचित्र-सा बालक है । इसने पक्षियों के विषय में एक पुस्तक लिखी है जिसका चित्रकार भी यह स्वयं ही है । इसने कई अन्य कथाएँ और कविताएँ भी लिखी हैं । यह बालक इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान,नक्षत्र-विद्या और साहित्य में अतिप्रवीण है । यह अपनी स्मृति-शक्ति द्वारा ही सब जातियों के झण्डों का चित्र खेंच सकता है । रात्रि के आकाश से वह ऐसा परिचित है जैसे अपने बाग से । वह बिना किसी कष्ट के अपने टैलिस्कोप से जहाँ चाहे वहाँ नक्षत्रों को देख सकता है । इसके अतिरिक्त वह खेलने, कूदने, दौड़ने में भी बहुत प्रवीण है । (क्रमशः)

(XIII) संख्या ८ में कही हुई बात भी सत्य है। वहाँ एक बड़ा तालाब है और तीन छतों वाला घर भी है, जिसमें से दो छतें पानी के नीचे हैं। उसे वह तालाब दिखाया गया तो उसने पहचान लिया कि यह तालाब वहीं है।

(XIV) उसका यह कहना कि वह गोंद गाँव का पुरोहित था, यह भी सिद्ध हुआ। उसका पुत्र घूरे अब भी उसी स्थान के एक मन्दिर का पुजारी है।

(XV) संख्या ११ में कही हुई बात भी हर प्रकार से सत्य सिद्ध हुई। वहाँ के लोगों का अब तक विश्वास चला आता है कि वहाँ साँप है। हरबक्ष ने इसी विश्वास को सत्य समझकर अपने हृदय में स्थान दे दिया होगा।

(XVI) संख्या १५ में कही हुई बात को उसने फिर नहीं दुहराया। उसने कहा कि उसकी अपनी लम्बी दाढ़ी थी और खोज करने पर यह बात सत्य सिद्ध हुई।

(XVII) साँप की कहानी के विषय में उसने कहा कि एक बड़ा साँप उसे जंगल में मिला था जिसे उसने मुग्ध कर दिया था और उसे उठाकर गूलर के वृक्ष के पास फेंक दिया था; किन्तु इस कथा के विषय में कुछ सिद्ध नहीं हुआ।

(XVIII) तब उसे अपने पुराने घर का रास्ता बताने को कहा गया। वह ४-५ कदम आगे बढ़ा और फिर हिचककर वहीं ठहर गया। मैंने उसका हाथ पकड़ा और हम चलने लगे। वह एक दूसरी गली की ओर मुड़ा और थोड़ी हिचकिचाहट के बाद सीधा अपने घर की ओर मुड़ा और अपने पुत्र घूरे को अपनी उँगली से पकड़ लिया। रास्ता लम्बा और चक्करदार था, किन्तु बालक ने उस घर का पता लगा लिया। वहाँ बहुत-से घर उजाड़ अवस्था में थे। अपने घर की अवस्था को देखकर आश्चर्य में पड़ गया और उजड़े घरों में से अपने घर को न पहचान सका। तहसीलदार कहता है कि यदि वह अकेला होता तो अपने घर को न पहचान सकता। उसे अपने घर की एक फीकी-सी स्मृति थी।

(१९) बालक ने 'हत्योरी' गाँव के पुरुषों में से, जिन्हें उसने अपने पूर्वजन्म में देखा हुआ था, किसी को नहीं पहचाना; और न ही वह दूसरों के नाम ही याद कर सका, सिवाय उनके जिनके नाम वह पहले कह चुका था।

अन्त में तहसीलदार कहता है कि मेरी सम्मति में बच्चे को किसी ने सिखाया नहीं था। यह पूर्वजन्म की स्मृति की एक अद्‌भुत आश्चर्यजनक वास्तविक घटना है।

सच्चा स्वराज

-स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज

[1]

आज भारत के कोने-कोने में स्वराज का शब्द गूंज रहा है। जो लोग इस शब्द के महत्व को समझते है और जो नहीं समझते, उन सबको यह अत्यन्त प्रिय है। इसमें न जाने क्या आकर्षण भरा पड़ा हे ? इसमें न जाने कौन-सी मिठास ओत-प्रोत है। स्वराज इस शब्द का उच्चारण होते ही बालक नाचने लगते है, युवकों का रुधिर जोश से दौड़ने लगता हैं। प्रौढ़ पुरुष भी सीना सीधा करने बैठ जाते है और बूढ़े लोग और कुछ नहीं तो कान लगाकर सुनने ही लगते हैं। भारतवासियों को यह स्वराज्य शब्द कुछ विलक्षण-सा प्रतीत होता है और साथ ही कुछ नया भी मालूम देता है। जो शब्द ऐसा आकर्षणशील है, जिसकी महिमा ऐसी अपार प्रतीत होती है, उसका अर्थ क्या ? उसका असली तात्पर्य क्या है- ये प्रश्न इस समय अप्रासगिक नहीं है।

पाठकगण, आप समाचार पत्रों में तथा पुस्तकों में स्वराज्य नाम का बारम्बार पाठ पढ़ाते होंगे। क्या आपने कभी विचारा कि यह स्वराजय क्या वस्तु है ? शायद आप में से थोड़ो ने ऐसा विचार किया होगा और उन थोड़ों में से भी अधिक संख्या ने इस शब्द के बहुत संकुचित अर्थ समझते होंगे। उन्होंने यही समझा होगा कि भारतवर्ष के लिए स्वराज्य का तात्पर्य यह है कि भारतनिवासी अपने देश का स्वयं ही प्रबन्ध करें। देशवासी अपने आप ही अपने ऊपर कर लगाए और सरकार की बड़ी से बड़ी नौकरी तक पहुँच सकें। शायद इसी प्रकार कोई स्वराज्य आपके दिमाग में घूम जाता होगा जब आप किसी समाचार पत्र में स्वराज्य पर लेख पढ़ते होंगे।

हमारा निवेदन है कि स्वराज्य शब्द की यह व्याख्या बहुत संकुचित है। स्वराज्य शब्द के गर्भ में जो भाव घुसे हुए है, उनका एक चतुर्थांश भी इस व्याख्या से पूरी तरह नहीं आता। स्वराज्य को केवल राजनीतिक अर्थों में पढ़ना भारी भूल है- और शब्द के महत्व को घटाना है। यह शब्द बड़ा व्यापक है- इसके अर्थक्षेत्र का पारावार नहीं। मनुष्य या मनुष्य समूह की क्रियाओं का जहाँ तक विस्तार है, स्वराज्य शब्द वहीं तक व्याप्त है। राजनीति तो मनुष्य की चेष्टाओं का एक बहुत ही थोड़ा भाग है। मनुष्य या मनुष्य समाज का जीवन न राजनीति में प्रारम्भ होता है और न ही उसमें अस्त होता है। राजनीति तो मनुष्य-समाज के जीवन की एक मध्य सीढ़ी है। जो कार्य भाग न प्रथम और न अन्तिम होने का गौरव रखता है, स्वराज्य शब्द को केवल उसी तक परिमित कर देना ठीक नहीं।

साथ ही यह भी समझ रखना चाहिए कि केवल राजनीतिक स्वराज्य असम्भव है। स्वराज्य को केवल नीति की परिभाषा मान लेने से हम इसे एक बड़ा अधूरा सिद्धान्त स्वीकार करते हैं। देशों और जातियों का इतिहास हमें बताता है कि केवल राजनीतिक स्वराज्य न कहीं उत्पन्न हो सका है और यदि कहीं उत्पन्न भी हुआ तो रह नहीं सका। जिन लोगों ने स्वराज्य की इस अपूर्ण व्याख्या को मानकर कार्य प्रारम्भ

किया, उन्होंने कभी कृतकार्यता लाभ नहीं की। स्वराज्य एक शब्द है-किन्तु इस छोटे-से शब्द में एक संसारव्यापी नियम समाया हुआ है। इस लेखमाला में हम उसी व्यापी नियम को भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाना चाहते हैं।

किन्तु प्रथम इसके कि हम इस शब्द के भिन्न-भिन्न भागों की विस्तृत व्याख्या करें, आवश्यक है कि इसके शब्दार्थ पर ध्यान देकर मौलिक सिद्धान्त को समझ लें। स्वराज्य शब्द दो शब्दों के मिलने से बना है- स्व तथा राज्य। स्व का अर्थ है अपना और राज्य का अर्थ है आधिपत्य, अपना आधिपत्य। इसी शब्द में यही भाव स्वयं आ जाता है कि अपने ऊपर अपना आधिपत्य। यह भाव नहीं निकालना चाहिए कि किसी अन्य पर अपना राज्य भी स्वराज्य कहा जा सकता है। एक नौकर पर स्वामी का आधिपत्य स्वराज्य नहीं-अपने देह या परिवार पर आधिपत्य ही गृहपति का स्वराज्य है। अपने ऊपर अपना आधिपत्य-इस शब्दार्थ में कोई विशेष राजनीतिक स्पर्श नहीं है, इसलिए स्वराज्य शब्द को केवल राजनीतिक स्वराज्य के अर्थों में प्रयुक्त करना शब्द के साथ अन्याय करना है। स्वराज्य शब्द मनुष्य की हर एक प्रकार की जीव प्रवृत्ति के सम्बन्ध में प्रयुक्त किया जा सकता है। स्वराज्य शब्द का प्रयोग हम व्यक्ति के विषय में, धर्म के विषय में, समाज के विषय में, तथा साहित्य के विषय में कर सकते हैं। इसी प्रकार ढूंढते जाएँ तो हम देखेंगे कि स्वराज्य का विषय उदार-दृष्टि से देखा जाए तो बड़ा विशाल है। इसके बड़े-बड़े प्रान्तों को पृथक् करके हम चार प्रकार के स्वराज्य का परिगणन कर सकते है:-

(1) आत्मिक स्वराज्य (2) धार्मिक स्वराज्य

(3) साहित्यिक स्वराज्य (4) सामाजिक या नैतिक स्वराज्य

इन चारों भागों के करने से यह तात्पर्य नहीं है कि स्वराज्य का सिद्धान्त इन चार प्रान्तों में ही मिल सकता है। इनसे बहुत आगे और पीछे भी इस सिद्धान्त का विस्तार है। इनके लेने से हमारा केवल इतना अभिप्राय है कि ये मुख्य-मुख्य प्रदेश हैं जिनमें स्वराज्य सिद्धान्त के मर्म को हम भलीभाँति अनुशीलन कर सकते हैं।

साथ ही एक और प्रश्न भी उठता है स्वराज्य की इस विस्तृत व्याख्या के विषय में वेद क्या कहता है?

(सधर्म प्रचारक १६ दिसम्बर १९१६)

[२]

आत्मिक स्वराज्य

सारे स्वराज्य का मूलभूत आत्मिक स्वराज्य। स्व-मुख्यतया आत्मा का ही निर्देश करता है- उसका अपने ऊपर आधिपत्य सब प्रकार के स्वराज्य का आधारभूत समझना चाहिए। अपने ऊपर अपना ही अधिकार हो और किसी दूसरी शक्ति का -मन का या इन्द्रियों का -अधिकार न हो, यही आत्मा का स्वराज्य है। यदि आत्मा को और शक्तियों ने दबा लिया तो दासता का ओंकार प्रारम्भ हो जाता है। जो आत्मा अपने

सैनिक इन्द्रियों के या मन्त्री के ही अधीन हो जाए वह फिर संसर में सबके वश में आ सकता है। स्वराज्य का आरम्भ इन्द्रियों के विजय से होता है। वेदों में इन्द्रियों को वश में रखनेवाले जीवात्मा का नाम इन्द्र आता है। इन्द्र की वेदों में अपार महिमा वर्णित की है। जो पुरुष इन्द्रियों का स्वामी इन्द्र है, उसके सभी अभीष्ट फलों की प्राप्ति होती है।

अनवद्यैरभि द्युभिर्मख सहस्वदर्चति। गणैरिन्द्रस्य काम्यैः। ऋ १,६,८,।

अनिन्दनीय और दिव्यगुणयुक्त चाहने योग्य उत्तम फलों के समूह से युक्त होता हुआ इन्द्र का प्रत्येक श्रेष्ठ कार्य सिद्धि को प्राप्त होता है।

इन्द्रिय शब्द की उत्पत्ति का मूल है, जो इन्द्र की हो। जो इन्द्र की हैं, उनका जो स्वामी है, वही इन्द्र-वही जीवात्मा है। उस वशी जीवात्मा के सारे ही काम सिद्ध होते है, इसमे सन्देह नहीं।

यह एक अति सरल तर्क है। जो लोग इस तर्क को भी नहीं समझ सकते, उनके बनाए हुए मार्ग पर चलकर भारी धोखा मिलता है। फ्रांस में इतनी भारी राज्य क्रान्ति हुई। राजा और रईसों के अत्याचारों से तंग आकर प्रजा ने स्वाधीनता का झंडा उठाया और प्रजा का स्वराज्य स्थापित करने का यत्न किया। यह ठीक है कि प्रजा के जोश ने राजा को सिंहासन पर से उतार दिया, यह भी ठीक है कि रईसों को फ्रांस से भागने के सिवाय या गर्दन झुका देने के सिवाय बचने का कोई चारा नहीं दिखा। किन्तु यह भी सच है कि फ्रांस के अत्याचारी राजाओं ने शायद 25 साल में इतना खून न बहाया होगा जितना क्रान्ति के समय प्रजा ने 7 सालों में बहा दिया। संसार ने इतना भयानक दृश्य इससे पूर्व नहीं देखा था। प्रजा के स्वराज्य के नाम पर इतने रुधिर को बहता हुआ देखकर बड़े-से-बड़े स्वाधीनता पक्षपाती भी स्वाधीनता के नाम से घबराने लगे थे।

इसका कारण क्या था ? ऐसा महान् अनर्थ क्यों हुआ ? कारण यही था कि जो प्रजा स्वाधीनता के झण्ड़े के नीचे आकर युद्ध करने के लिए खड़ी हुई थी-उसमें आत्मिक स्वराज्य नहीं था। उन्होंने संयम का पाठ नहीं पढ़ा था। क्रोधादिदोष आने के समय अपने आपको वश में लाना और जिसका विश्वास नहीं है उसे अपराधी के साथ ही सूली पर न धकेल देना-यहीं संयम कहाता है। जो मनुष्य काम, क्रोध, लोभ और मोह के आवेग के समय इन्द्रियों को मुट्ठी से नहीं निकलने देता वही आत्मिक स्वराज्यवान् कहा जा सकता है।

यह नियम सदा याद रखने योग्य है। जिस स्वराज्य की पुकार शराबखाने या जुएखाने से चलेगी, वह स्वराज्य नहीं। जो भी यत्न ऐसे स्वराज्य के लिए किए जाएँगे वे देश या जाति को सुख देने वाले नहीं हो सकेंगे। ऐसा स्वराज्य यदि दो दिन के लिए आ भी जाए तो वह अमृत के स्थान में वैतरणी नदी का प्रवाह चलाने वाला होगा।

अपनी इन्द्रियों का संयम पहला और मूलभूत स्वराज्य हैं। यही आत्मिक स्वराज्य कहलाता है। यह सब स्वराज्यों की पहली सीढ़ी है।

धार्मिक-स्वराज्य

इडा सरस्वती मही तिस्त्रो देवीर्मयो भुवः वर्हिः सीदन्तु अस्त्रिधः। ऋ. १।१३।९

इस मन्त्र का तात्पर्य है कि (इड़ा) स्तुतिरूपवाणी परमात्मा की उपासना (सरस्वती) वाणी, या वाङ्मय अर्थात् विस्तृत अर्थों में साहित्य और (मही) पृथ्वी ये तीनों अहिंसित होती हुई संसार में स्थित हों। इस मन्त्र में तीन जीवों की अहिंसा के लिए प्रार्थना है। प्रत्येक जाति और मनुष्य जाति का और उन द्वारा व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि इन तीनों चीजों को हिंसित न होने दें-दूसरे ये अत्याचार या अनुचित प्रभाव में न दबने दे। इन तीनों रक्षणीय चीजों से प्रथम चीज 'इड़ा' या धार्मिक वाणी है। परमात्मा से प्रत्येक मनुष्य का जो सम्बन्ध है-वह निजू है, इसीलिए अपने धर्म से प्रत्येक व्यक्ति का अपना ही सम्बन्ध है। इसमें दूसरे को कोई दखल नहीं। परमात्मा जैसे दूसरे का पिता है वैसे ही मेरा भी पिता है, जैसे मुझे अधिकार है कि मैं अपने पिता की यथेष्ट रीति से सेवा करूँ उसे यथेष्ट नाम से पुकारूँ इसी प्रकार यह भी मेरा अधिकार है कि मैं परमात्मा की अपनी अभिष्ट रीति से स्तुति-प्रार्थना उपासना करूँ और उसे यथेष्ट नाम से पुकारूँ दूसरा कोई व्यक्ति मुझे मेरे धार्मिक विचार में बाधित नहीं कर सकता। मुझे तलवार का, सामाजिक बायकाट या किसी अन्य प्रकार का भय या लोभ दिखाकर जो परमात्मा के और मेरे सेवक सम्बन्ध में दखल देता है तो वह अत्याचारी हैं। वेद की आज्ञा है- कि मैं उसके अत्याचारों की परवाह न करता हुआ अपनी 'इड़ा' की रक्षा करूँ।

साथ ही यह भी निश्चित है कि जैसा पिता और पुत्र का सीधा सम्बन्ध होता है, वैसा ही मनुष्य का और परमात्मा का सीधा सम्बन्ध है। पिता पुत्र के बीच में पड़ने की किसी को न आवश्यकता है और न अधिकार है। ऐसे ही रोम में बैठे हुए किसी पोप को मन्दिर में बैठे हुए ब्राह्मण को या काशी में बैठे हुए किसी पुजारी को यह आवश्यकता नहीं कि दूसरे मनुष्य की आत्मा का स्वामी बनकर परमात्मा तक उसकी इच्छाएँ पहुँचाएँ, और अपनी थैली में पैसे पहुँचाएँ। प्रत्येक मनुष्य को अधिकार है कि वह अपने हृदय से निकले हुए शब्दों द्वारा परमात्मा की प्रार्थना उपासना करे। हृदय के असली भाव-पुष्पों से भगवान् की अर्चना करे, या बाजार से मोल लिए नकली कागजी फूलों की भेंट करके परमात्मा को धोखा न देना चाहे। यह धार्मिक स्वराज्य का दूसरा अंग है।

आत्मिक स्वराज्य का स्वाभाविक परिणाम धार्मिक स्वराज्य है, और यह अगले सब प्रकार के स्वराज्यों की सीढ़ी है। (सधर्म प्रचारक २३ दिसम्बर १९१६)

[३]

साहित्यिक-स्वराज्य

वेद के जिस मन्त्र में इड़ा सरस्वती और मही की रक्षा का उपदेश है, वह पहले दिया जा चुका है।

इड़ा से धार्मिक वाणी और सरस्वती से लौकिक भारतीय साहित्य-का ग्रहण है। सरस्वती की रक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक जाति और प्रत्येक राष्ट्र का परम कर्त्तव्य है। आत्मा शरीर का स्वामी है, धर्म की शरीर का प्राण है, तो साहित्य शरीर में रुधिर का काम देता है, जैसे रुधिर हृदय से उत्पन्न होकर शरीर के एक-एक अंग में जाता और जीवन का संचार करता है, अंगों को सचेत करता और परिपुष्ट करता है, उसी प्रकार साहित्य भी जाति के हृदय स्थल में उपजे हुए भावों को कोने-कोने में पहुँचाकर जाति के जीवन और पोषण का कारण होता है। यदि भारत का साहित्य विशुद्ध और जीवनाणुओं से युक्त है, तो जाति दोनों दिन वृद्धि करती जाएंगी। उसके अंग परिपुष्ट और दर्शनीय होते जाएँगे। किन्तु यदि वह रुधिर गन्दा हो जाए, यदि उसमें रोग जन्तु प्रविष्ट हो जाए, तो फिर आज ज्वर है तो कल फोड़ा हो जाएगा। रुधिर के समान साहित्य भी जाति शरीर में बड़ी द्रुतगति से भागता और नेताओं की सम्मतियों को सर्वसाधारण तक पहुँचाता है।

साहित्य का स्वराज्य क्या है? व्यक्ति के लिए सरस्वती सम्बन्धी स्वराज्य का तात्पर्य है- मनुष्य को अपने आत्मा के अनुकूल वाणी के प्रयोग का अधिकार हो, किसी दूसरे के बलात्कार से वह अपनी वाणी को न बदले। यह व्यक्तिगत साहित्य स्वराज्य। व्यक्ति सरस्वती की हिंसा यही कहाती है कि मुख से जो वाणी निकले वह भय लोभ या निर्बलता के कारण आत्मा की वाणी हो। इस स्वराज्य में दो प्रकार के विघ्न उपस्थित होते हैं, एक तो आत्मा की प्रकृति से कई लोगों के हृदय मैं सत्य की भावना इतनी कम होती है, कि वे आत्मा के शब्द को निकाल ही नहीं सकते। असली शुद्ध आटे में तेल मिलाना उनका स्वभाव-सा हो जाता है। किसी बाह्य कारण से नहीं, अपितु अन्दर की आवृत्ति से मजबूर होकर वे अन्यथा बोलते है। ऐसे लोगों का स्वराज्य अन्दर से घुन से ही खाया जाता है। वाणी की स्वाधीनता को रोकने के दूसरे कारण बाह्य होते हैं। बाह्य कारणों में राजभय, लोकभय, पितृभय, धन लोभ, पद लोभ, आदि अनेक कारणों में होते हैं। इन कारणों में फँसकर मनुष्य अन्यथा कहने पर बाधित हो जाता है। इस प्रकार बाधित होकर वाणी की स्वाधीनता नाश करने का पाप दोनों पर ही होतो है। जो भय दिखाकर दूसरे की सरस्वती की हिंसा करता है वह भी पाप का भागी होता है, और जो अपने आपको इतना निर्बल कर लेता है कि भय या लोभ के झटपट ही काबू में आ जाए, वह व्यक्ति भी पाप का कम भागी नहीं हैं। इन दोनों प्रकार के पापों से बचता हुआ जो मनुष्य न दूसरे की वाणी पर बाधा डालता है और न अपनी वाणी पर बाधा पड़ने देता है वही मनुष्य वस्तुतः साहित्य स्वराज्य में निवास करता है।

यह व्यक्ति के सम्बन्ध में सरस्वती साम्राज्य बताया। इसी प्रकार जाति के सम्बन्ध में भी समझ लेना चाहिए। जाति की सरस्वती पर भी ऐसे ही अनेक प्रकार के विघ्न आ सकते हैं, जिससे उसके स्वराज्य में अनेक प्रकार की रुकावटें उपस्थित हों। जाति के सम्बन्ध में साहित्यिक स्वराज्य का तात्पर्य यह होता है कि किसी जाति का साहित्य स्वतन्त्र विहार करे- न कोई आभ्यान्तर कारण ही उसमें बन्धन डाल सके, और न कोई बाह्य कारण ही उसके स्वच्छन्द विहार को रोक सके।

जाति के साहित्य पर बन्धन डालने वाले आभ्यन्तर कारण कई हो जाया करते है। कभी-कभी जाति के जीवन में ऐसे समय आते हैं जब धार्मिक पुस्तकों का लिखा जाना उचित समझा जाता है। इतना उचित समझा जाता है कि और किसी विषय में भी यत्न करना कम-से-कम अपराध माना जाने लगता है। साहित्य की उन्नति में यह बड़ी भारी बाधा समझनी चाहिए। एक-दूसरे प्रकार की बाधा तब उपस्थित होती है जबकि कोई आचार्य आकर भाषा के अंग-प्रत्यंग पर व्याकरण या अलंकार शास्त्र की ऐसी कड़ी जंजीरें डाल देता है कि उसका इधर या उधर हिलना असम्भव हो जाता है। स्वच्छन्द विहारिणी सरस्वती-नदी एक नहर के रूप में आ जाती है। उसका फैलाव, उसकी नए-नए देशों में सैरें, उसका स्वाभाविक सौन्दर्य-यह सब कुछ सपना हो जाता है। व्याकरण हो, और अलंकार शास्त्र भी हों, किन्तु उनका उद्देश्य भाषा की विद्यमान दशा समझना होना चाहिए, न कि उसे बाँधना ही उसका एकमात्र लक्ष्य हो जाना चाहिए। सरस्वती परमात्मा की दी हुई अमृत नदी है, उसका बन्धन बुरा है, जाति के जीवन को कुंठित करने वाला है।

सरस्वती की हिंसा करने के बाह्य साधनों में से मुख्य किसी दूसरे साहित्य का भारी आक्रमण है। साहित्यों पर ऐसे आक्रमण प्राय: होते रहते हैं। भारतवर्ष में 18वीं शताब्दी में फारसी तथा उर्दू का भयंकर आक्रमण हुआ था; जर्मनी के साहित्य पर भी लगभग उसी समय फ्रेंच भाषा का भयंकर आक्रमण हुआ था और आज फिर हमारे देश के समस्त साहित्य पर अंग्रेजी भाषा का जबरदस्त हमला हो रहा है। अंग्रेजी बोलना, अंग्रेजी पढ़ना, भाषा में अंग्रेजी घुसेड़ना, अंग्रेजी में पुस्तके लिखने और समाचार पत्र लिखना- यहाँ तक जातीय सभाओं में व्याख्यान भी अंग्रेजी भाषा में ही देना भारतवासिवयों का धर्म-सा हो रहा है। यह जातीय सरस्वती की सबसे बडी हिंसा है – यह साहित्यिक स्वराज्य का सबसे बड़ा अंग विच्छेद है।

वेद इन सब बाधाओं को दूर करके व्यक्तिगत और जातीय साहित्य के स्वराज्य की रक्षा करने का उपदेश करता है।

(सधर्म प्रचारक ३० दिसम्बर १९१६)

[4]

सामाजिक स्वराज्य

व्यक्ति के लिए तीन प्रकार का स्वराज्य बतलाया जा चुका है। वह स्वराज्य मनुष्य मात्र द्वारा उपादेय है और बलिदान पाने योग्य है। वह स्वराज्य तीन प्रकार का है - (1) आत्मिक स्वराज्य(2) धार्मिक स्वराज्य(3)साहित्य स्वराज्य।

व्यक्तियों के समूह का नाम समाज है। व्यक्तियों के लिए जो स्वराज्य उपादेय है, समाज के लिए भी वही स्वराज्य उपादेय है। समाज को भी आत्मिक, धार्मिक और साहित्यिक स्वराज्य की आवश्यकता है। इन तीन स्वराज्यों के होते हुए ही समाज उन्नति कर सकता है, इनकी विद्यमानता में ही उसके अंग खुली तौर पर फैल और बढ़ सकते हैं। जिस समाज में तीन प्रकार का स्वराज्य नहीं रहता, चीनी स्त्रियों के पैरों की

भाँति वह बढ़ नहीं सकता।

वह समाज कई रूपों में प्रकाशित होता है। समाज का एक साधारण और मौलिक रूप परिवार है, परिवारों के समूह का नाम जाति है। वही जाति एक राज्य और एक देश के साथ दृढ़ सम्बन्ध होने पर राष्ट्र नाम से पुकारी जाने लगती है। परिवार, जाति और राष्ट्र ये तीनों ही अपने-अपने ढंग का स्वराज्य चाहते हैं। आजकल पृथ्वी पर परिवारों या जातियों के नहीं-राष्ट्रों के दिन है। आजकल की सामाजिक इकाई राष्ट्र ही है। परिवार की इकाई उन स्थानों में या जातियों में ही पाई जाती है, जिनमें सभ्यता अभी निचली अवस्था से नहीं निकली या अत्यन्त गिरकर नीचे दर्जे की हो गई है। जाति अर्थात् रुधिर सम्बन्ध में बँधे हुए परिवार ही जाति नाम से कहे जाते हैं। आज भी जातियाँ है किन्तु उनका बन्धन एकता का अधिक प्रेरक नहीं। केवल आर्यजाति में होना अंग्रेजों और जर्मनों से युद्ध नहीं रोक सका, पीली जाति का सम्बन्ध चीन और जापान की तलवारों को म्यान में नहीं ढाल सकेगा। जातियाँ अपने सम्बन्ध से एकता का साधन हो सकती हैं, किन्तु एकमात्र साधन नहीं हो सकता है। अब एक-एक राष्ट्र में अनेक जातियों के लोग होते जाते हैं, और वे राष्ट्र के बन्धन में बँधकर जातीय भेदों को भूल जाते हैं।

राष्ट्र का स्वराज्य

राष्ट्र का स्वराज्य व्यक्ति के स्वराज्य के समान तीन प्रकार का तो हाता है, किन्तु उसका आत्मिक स्वराज्य राष्ट्र के सम्बन्ध में और ही प्रकार का होता है। वह स्वराज्य वेद के शब्दों में मही-स्वराज्य है। राष्ट्र का मही अर्थात् पृथ्वी से विशेष सम्बन्ध निश्चित है- आवश्यक है। इसलिए राष्ट्र के विचार में मही को नहीं भुलाया जा सकता। एक देश में एक राज्य के नीचे रहने वाले समाज का नाम राष्ट्र हैं राष्ट्र के लिए आवश्यक है कि वह अपनी मही-भूमि या मातृभूमि के स्वराज्य की भी रक्षा करे। वह रक्षा राज्य द्वारा हो सकती है इसलिए राष्ट्र के लिए राज्य रक्षा द्वारा मही रक्षा करना अत्यन्त आवश्यक है।

राष्ट्र का स्वराज्य इस प्रकार इन रूपों में परिणत हो जाता है-

(1) धार्मिक स्वराज्य

(2) साहित्यिक स्वराज्य

(3) मही-स्वराज्य

राष्ट्र का धार्मिक स्वराज्य

जैसे व्यक्ति की अपनी इडा धार्मिक स्तुति है- वैसे राष्ट्र की भी इड़ा है। राष्ट्र का भी अपना धर्म हैं यह हो सकता है कि एक ही राष्ट्र में अनेक मतों पर ही विश्वास रखने वाले पुरुष विद्यमान हों, किन्तु जो राष्ट्र पक्का राष्ट्र बन जाता है, उसका धर्म प्रायः एक प्रकार का हो जाता है। एक ही धार्मिक भाव का उनमें संचार हो जाता है। उनको राष्ट्रीय विशेषताएँ कहते हैं। राष्ट्र के लिए उन राष्ट्रीय धर्म के अंगों का सुरक्षित करना अत्यन्त आवश्यक है। (सधर्म प्रचारक १३ जनवरी १९१७)

कोटा संभाग में वेद प्रचार सप्ताह संपन्न

जुलाई माह में कोटा संभाग की आर्य समाजों द्वारा संचालित महर्षि दयानंद सरस्वती प्रचार समिति का आठ दिवसीय वेद प्रचार कार्यक्रम संपन्न हुआ। इस कार्यक्रम में आर्य समाज के सदस्य सामूहिक रुप से इंदिरा गांधी नगर, आदर्श विकास कॉलोनी, उदवाडा, ग्राम आमली पाठ, खेड़ा रसूलपुर, ग्राम अर्जुनपुरा, शिवपुरा, बोरखेड़ा, गुरु विरजानंद पब्लिक स्कूल रोजड़ी, नया गांव, कोटडी रोड स्थित दयानंद भवन, गुमानपुरा आदि स्थानों पर गए तथा लोगों के मध्य वेदों की शिक्षा, वेदों में जीवन परिकल्पना, अध्यात्म आदि विषयों पर व्याख्यानों एवं भजनोपदेशों का आयोजन किया, साथ ही समाज में व्याप्त अंधविश्वास एवं कुरीतियों के विरुद्ध लोगों को जागरुक किया।

आर्य जगत के वयोवृद्ध भजनोपदेशक अलीगढ़ से पधारे पंडित भूपेंद्र सिंहजी एवं भरतपुर से पधारे पंडित लेखरामजी शर्मा ने भजनों के माध्यम से अंधविश्वासों, कुरीतियों, जड़ पूजा आदि त्यागकर वैदिक मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी।

इस अभियान में पंडित अग्निमित्र शास्त्री ने राम एवं रामायण की वैज्ञानिक अवधारणात्मक विशद व्याख्या की और कहा कि हमने वैदिक अध्ययन–अध्यापन की परंपरा को छोड़ा जिसके परिणाम स्वरुप पतन की ओर अग्रसर हुए। शास्त्री जी ने वेदों और वेदांगों से लोगों को परिचित कराया और कहा कि वेदों का ज्ञान जीवन का उत्थान करने वाला है तथा विकार नष्ट करने वाला है।

पंडित बिरदी चंदजी शास्त्री ने कहा कि वेद में हमारे निजी, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं वैश्विक संबंधों की समीचीन व्याख्या की गई है, जिसके अनुसार समुद्र पर्यंत यह पृथ्वी एक ही राष्ट्र है। यह हमारी विराट संस्कृति एवं गहन चिंतन का परिचायक है जो एक व्यक्ति से होकर कुटुंब, ग्राम, समाज, पंचायत, राज्य तथा राष्ट्र एवं पृथ्वी तक विस्तारित होती है। हमारी मान्यता **"वसुधैव कुटुंबकम्"** की रही है। समापन समारोह में कोटा उत्तर के विधायक श्री प्रहलाद गुंजल ने कहा कि हमारा इतिहास शक्ति, साहस, वीरता, त्याग एवं बलिदान का इतिहास है। महर्षि दयानंद ही वह व्यक्तित्व था जिसे सत्य वैदिक पथ पर चलते हुए कष्टों की पराकाष्ठा से गुजरना पड़ा, लेकिन उन्होंने कभी भी वेद–पथ से विचलन स्वीकार नहीं किया। महर्षि प्रचंड राष्ट्रहितपोषक थे। स्वतंत्रता आंदोलन में महर्षि का अमूल्य योगदान रहा है एवम् स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास आर्य समाज के योगदान का ऋणी रहेगा। श्री गुंजल ने कहा कि आर्य समाज वैचारिक क्रांति की मशाल है तथा विश्व में इसकी अपनी पहचान है। उन्होंने आर्य समाज के उज्जवल भविष्य की कामना की।

समापन समारोह में जिला प्रधान अर्जुन देव चड्ढा, मंत्री श्री कैलाश बाहेती, वेद प्रचार समिति के प्रधान श्रीचंद गुप्ता, संयोजक एडवोकेट चंद्रमोहन कुशवाह, आर्य समाज रामपुरा के मंत्री श्री रमेश चंद्र गोस्वामी, श्री हरिदत्त शर्मा, पंडित रामदेव शर्मा, प्रभु सिंह कुशवाहा, राम प्रसाद यादव, जी एस दुबे, आर्य समाज भीमंडी से श्री कौशल जी, अर्जुनपुरा खेडा रसूलपुर से सभी आर्यजन उपस्थित रहे। ...न श्री चंद गुप्ता एवम् एडवोकेट चंद्र मोहन कुशवाहा ने समारोह का सफल संचालन किया ...ते पाठ के उपरांत ऋषिलंगर आयोजित किया गया।

महर्षि पाणिनिनगर में वृहद् वृष्टि यज्ञ व वार्षिकोत्सव सम्पन्न

मगरा पूंजला स्थित आर्य समाज मंदिर,महर्षि पाणिनिनगर के तत्वावधान में 16 से 23 जुलाई 2017 तक आयोजित आठ दिवसीय वृहद् वृष्टि यज्ञ व आध्यात्मिक–सत्संग के साथ वार्षिकोत्सव सम्पन्न हुआ। संयोजक श्री गजेन्द्रसिंह सांखला ने बताया कि आर्यजगत् के संत शिरोमणि आचार्य सोमदेव जी के ब्रह्मत्व में वेद मन्त्रों से मंगल कामना हेतु वृहद् वृष्टि यज्ञ किया गया। जड़ी बूटियॉ मिश्रित हवन सामग्री से पूरा वार्तावरण सुगन्धित हो गया और इन्द्र देवता ने प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिया। आचार्य जी ने बताया कि यज्ञ व धर्म को जो मानव जान लेता है, वह वासनाओं से मुक्त होकर प्रभु के परमसुख को प्राप्त करता है। उदाहरण सहित आर्यसमाज के शत्रुओं को इंगित करते हुए उन्होनें आर्यजनों को सावधान किया कि आर्यसमाज के आंदोलन को सुस्त न होने देना। दक्षिणा में आचार्य जी ने आर्यजनों से महर्षि के मिशन हेतु समय मांगा जिससे आर्यसमाज की बढ़ती और विश्व का कल्याण हो सके। सुप्रसिद्ध वैदिक भजनोपदेशिका बहन अंजली जी आर्या ने घर–परिवार को स्वर्ग बनाने, समाज व राष्ट्र का उत्थान करने, परमात्मा से प्रीति बढ़ाने की प्रेरणा देने वाले और महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व और कृतित्व दर्शाने के साथ साथ उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने वाले भजनों से सभी को आनन्दित किया। श्रोताओं ने तालियों से उनके साथ संगत की।

इस अवसर पर उ.प्र.,मध्यप्रदेश, दिल्ली, हॉलेण्ड के आर्यजनों सहित जोधपुर के सभी आर्य समाजों व आर्यजनों ने उत्साह से भाग लिया। वैदिक पुस्तक विक्रेताओं से लोगो ने रुचिपूर्वक वैदिक पुस्तकों की खरीदारी की ।

अंतिम दिन समापन समारोह के मुख्य अतिथि समाज सेवी श्री चन्द्रप्रकाश देवड़ा, विशिष्ठ अतिथि श्री गणपत सिंह भाटी, रामेश्वर सोनी, जयसिंह गहलोत पालड़ी, विक्रमसिंह सॉखला, मदनलाल तंवर, फल सब्जी मण्डी के डायरेक्टर राकेश परिहार थे।

समारोह में सर्व श्री दाऊलाल परिहार, सोहनसिंह गहलोत, किशोरसिंह गहलोत, भा.ज.पा जिला अध्यक्ष महेन्द्रसिंह, ब्रह्मसिंह चौहान, पूर्व पार्शद, माली संदेश पत्रिका के सम्पादक मनीष गहलोत, ज्ञानसिंह गहलोत, प्रताप देवड़ा, व जगीदश देवड़ा को सम्मानित करने के साथ साथ आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं का भी सम्मान किया गया।

पूरे कार्यक्रम में समाज के करण सिंह भाटी, ज्ञानसिंह, पृथ्वीसिंह टाक, हंसराज सॉखला, युधिष्ठिर गहलोत, हुकमसिंह सांखला, नरेन्द्र आर्य, डॉ.महेश परिहार, चेतनप्रकाश, रमेश मेहरा, राजा गहलोत, चेतनप्रकाश शर्मा, सेवाराम आर्य, हेमसिंह आर्य, भागीरथ जांगिड़, विश्णुप्रकाश सोलंकी, हिम्मतसिंह कच्छवाहा, कमलकिशोर आर्य, लक्ष्मण गहलोत, सोहनसिंह भाटी, किशनसिंह, आनन्दसिंह, सुभाष, इन्द्रप्रकाश, गौरव सोनी, श्रीमती संतोष आर्या, सरोज भाटी, दमयंती गहलोत, ललिता सॉखला, अदिति आर्य, विश्विता सॉखला, सम्पतराज देवड़ा, देवीलाल, भगवान, अशोक, मनोहर, श्रवण और जोधपुर नगर के समाज सेवी उपस्थित थे। समापन समारोह में मंच संचालन आर्यसमाज के मंत्री श्री शिवराम आर्य ने किया तथा प्रधान कैलाश चन्द्र आर्य ने सभी आगन्तुकों को धन्यवाद देते हुए ह्रदय से सभी का आभार व्यक्त किया ।

पाणिनिनगर आर्यसमाज में वृष्टि यज्ञ, भजन, प्रवचन व वार्षि उत्सव सम्पन्न

बहन अंजली आर्या

Postal Reg. Jodhpur/434/2015-17
Date Of Print 5-08-2017
जोधपुर पोस्ट ऑफिस द्वारा वितरण
Date Of Posting 9,10-08-2017

महर्षि दयानन्द स्मृति भवन न्यास, जोधपुर में 28, 29, 30 सितम्बर 1, 2 अक्टूम्बर 2017 को ऋषि सम्मेलन की तैयारियां जोरो पर चल रही है, महर्षि दयानन्द सत्संग हॉल का उदघाटन होगा जिसमें 21 कमरे भी साथ में है आप सभी को आमंत्रण करते है आप अधिक से अधिक संख्या में पधार कर इस कार्यक्रम की शोभा बढ़ावें।

नव निर्मित यज्ञशाला

सत्वाधिकारी महषि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के लिए प्रकाशक व मुद्रक विजयसिंह भाटी द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, महर्षि दयानन्द मार्ग, मोहनपुरा पुलिया के पास जोधपुर (राज.) से प्रकाशित एवं सैनिक प्रिण्टर्स, मकराणा मौहल्ला केरू हाऊस जोधपुर फोन 9829392411से मुद्रित ।

सम्पादक माबाईल नं. 9460649055